चन्दामामा

मई १९८६

"स्पाइडरमैन के बाद पिएंगे एक-एक और रसना!"

नये डायमंड कामिक्स

पिकलू और जादू का शीशा	4.00
अकुंर और लच्छो लोमड़ी	4.00
पलटू और सोने का कबूतर	4.00
ताऊजी और जादुई सेब	4.00
ढब्बू जी और उल्टी गंगा	4.00
चाचा चौधरी और पलीते की कमर	4.00

डायमंड कॉमिक्स पेश करते हैं——

भारत में पहली बार

कॉमिक्स डाइजेस्ट

144 पृष्ठों में मनोरंजन ही मनोरंजन

अंकुर बाल बुक क्लब——

डायमंड कामिक्स की बच्चों के लिये नई निराली अनुपम योजना अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनिये और हर माह घर बैठे, डायमंड कामिक्स, डाकव्यय की फ्री सुविधा के साथ प्राप्त करें।

डायमण्ड कामिक्स आज हर बच्चे की पहली पसन्द है। रंग बिरंगे चित्रों से भरपूर डायमण्ड कामिक्स हर बच्चा घर बैठे प्राप्त करना चाहता है। इस इच्छा के सैकड़ों पत्र हमें प्रति दिन प्राप्त होते हैं। नन्हें मुन्नों की मांग को ध्यान में रखकर हमने यह उपयोगी योजना शुरू करने का कार्यक्रम बनाया है। आपसे अनुरोध है इस योजना के स्वयं सदस्य बनें और अपने मित्रों को भी बनने की प्रेरणा दें:–

सदस्य बनने के लिए आपको क्या करना होगा:–

1. संलग्न कूपन पर अपना नाम व पता भर कर भेज दें। नाम व पता साफ-साफ लिखें ताकि पढ़ने में आसानी हो।
2. सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनीआर्डर या डाक टिकट द्वारा कूपन के साथ भेजें। सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
3. हर माह पांच पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 2/- की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी। हर माह हम पांच पुस्तकें निर्धारित करेंगे यदि आपको वह पुस्तकें पसन्द न हों तो डायमंड कामिक्स व डायमण्ड पाकेट बुक्स की सूची में से कोई सी पांच पुस्तकें आप पसन्द करके मंगवा सकते हैं लेकिन कम से कम पांच पुस्तकें मंगवाना जरूरी है।
4. आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जाएगा यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो कार्ड भरकर हमें न भेजें। यदि निर्धारित पुस्तकें पसन्द नहीं हैं तो अपनी पसन्द की कम से कम 7 पुस्तकों के नाम भेजें ताकि कोई पुस्तक उपलब्ध न होने की स्थिति में उनमें से 5 पुस्तकें आपको भेजी जा सकें।
5. इस योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।

सदस्यता कूपन

मुझे अंकुर बुक क्लब का सदस्य बना लें। सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनीआर्डर, डाक टिकट से साथ भेजा जा रहा है। (सदस्यता शुल्क प्राप्त न होने की स्थिति में आपको सदस्यता नहीं हो जायेगी) मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूँ।

नाम ....

पिता का नाम ....

पता ....

डाकखाना ....

जिला ....

सदस्यता शुल्क डाक टिकट से एडवांस आना जरूरी है

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002. PUBLICO/DC/MAY86

सुपर रिन की चमकार ज़्यादा सफ़ेद

किसी भी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से ज़्यादा सफ़ेद

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

स्कूल की
किताबों पर
लगाओ पारले.
टिफिन
बॉक्स में भी
भरो पारले.

PARLE
Melody
Chocolate Toffs

PARLE
POPPINS

PARLE Gluco

NAME
CLASS
DIV.
SUBJECT
SCHOOL
PARLE
POPPINS

NAME
CLASS
DIV.
SUBJECT
SCHOOL
PARLE
Gluco

everest/85/PP/334

सांस की बदबू हटाइए. दांतों की सड़न रोकिए.

कोलगेट का सुरक्षा चक्र अपनाइए!

कोलगेट से नियमित रूप से दांत साफ़ करने से
आपके परिवार में सभी की सांस ताज़ा व साफ़ और दांत मज़बूत व स्वस्थ.
यानि कोलगेट की सुरक्षा.

यह देखिए कोलगेट का भरोसेमंद
फ़ार्मूला किस तरह आपके दांतों की सुरक्षा करता है :

दांतों में छिपे अन्नकणों से सांस में बदबू और दांत में सड़न पैदा करनेवाले कीटाणु बढ़ते हैं.

कोलगेट का अनोखा असरदार झाग दांतों के कोने में छिपे हुए अन्नकणों और कीटाणुओं को निकाल देता है.

कोलगेट से नियमित रूप से दांत साफ़ करने से सांस ताज़ा व साफ़ और दांत मज़बूत व स्वस्थ.

ध्यान रखिए कि आपके परिवार में सभी हर भोजन के बाद कोलगेट से ही दांत साफ़ करें.
सांस की बदबू हटाइए. दांतों की सड़न रोकिए.
कोलगेट का सुरक्षा चक्र अपनाइए.

84-55 Hin

कोलगेट का ताज़ा
पेपरमिंट जैसा स्वाद मन में बस जाता है!

चन्दामामा

संस्थापकः चक्रपाणि संचालकः नागिरेड्डी

अपराध का अनुवेषण प्राचीन काल से ही एक कला तथा शास्त्रज्ञान के रूप में मान्यता प्राप्त करता आ रहा है। अपराधी को पहचान कर उसके अपराध को विधिपूर्वक प्रमाणित करने के लिए तार्किक मेधा की आवश्यकता है। इस तथ्य का निरूपण 'असली चोर' शीर्षक कहानी में हुआ है।

अमर वाणी

विज्ञं स्वं मन्यते चाज्ञ मज्ञो वर्तेत विज्ञवत् ।
मूकीभावं वहन् प्राज्ञः पुरुषेषूत्तमोत्तमः ।।

[विद्वान व्यक्ति अपने को अज्ञानी और अज्ञजन विद्वान की भाँति आचरण करता है। पर जो श्रेष्ठ विद्वान अपने बारे में मौन धारण कर रहता है, वह पुरुषों में श्रेष्ठतम है।]

वर्षः ३८ मई १९८६ अंकः ९

एक प्रतिः २-५० वार्षिक चन्दाः ३०-००

मुस्कुराए जाइए
ज़ायक़ेदार ... ट्रिंका के संग!
ट्रिंका पीजिए.
स्वादवाला. मतवाला.
ठंडे-ठंडे. भरे-भरे. खनखनाते गिलास.
पलभर में तैयार.
ट्रिंका— मज़ेदार.
हर बोतल से बनें ५० गिलास.
हर पैक से बनें ६ गिलास.
पाँच रसीले स्वाद : ऑरेंज.
लेमन. पाइनएप्पल. कोला.
फ्रूट पंच.
Trinka
Trinka
Soft Drink Mix
50
6
ट्रिंका
स्वाद है सच्चा-सब कहें अच्छा
cpc कॉर्न प्रोडक्ट्स कं. (इंडिया) लि.
CLARION/B/CP/14/193

अरिष्टनेमि

एक समय की बात है एक राजा शिकार खेलने के लिए वन में गया। सारा वन छान लेने के बाद भी राजा को कोई पशु दिखाई नहीं दिया। अन्त में, एकाएक उसे एक पहाड़ की तलहटी में दो वृक्ष के बीच एक हिरन दिखाई दिया। राजा ने लक्ष्य साधकर तुरन्त बाण छोड़ा। तभी एक मनुष्य का चीत्कार सुनाई दिया, 'आह !' राजा आश्चर्यविमूढ़ होकर उस आवाज़ की दिशा में दौड़ा। वहाँ हिरन नहीं, बल्कि हिरन की चर्म धारण किये एक मुनिकुमार बाण बिंध जाने के कारण मरा पड़ा था। राजा को अत्यन्त क्लेश हुआ।

राजा ने सोचा कि अपराध प्रकट होने के पूर्व ही उसे उस स्थान से भाग जाना चाहिए। पर दूसरे ही क्षण राजा ने उस बालक के माता-पिता से क्षमा-याचना करने का निश्चय किया। उसने चारों दिशाओं में दृष्टि डाली तो झरने के पास उसे एक कुटी दिखाई दी। राजा वहाँ पहुँचा। अरिष्टनेमि नाम के मुनि कुटी से बाहर आ रहे थे। राजा ने उन्हें प्रणाम कर पूछा, "मुनिवर, मृगचर्म धारण किये एक मुनिकुमार क्या पहाड़ की उस तलहटी की ओर गया था ?"

"हाँ, वह मेरा पुत्र है ! दर्भ लेने के लिए उधर गया है।" मुनि ने उत्तर दिया।

उसी समय दर्भ का पुलिन्दा लिये वह मुनिकुमार वहाँ आ पहुँचा।

राजा उसे देखकर स्तब्ध रह गया। उसकी वाणी मूक होगयी। फिर कुछ देर बाद संभलकर बोला, "मुनिवर, हिरन समझकर मैंने आपके पुत्र पर बाण चलाया था। बाण के बिंध जाने से मृत पड़े उस कुमार को मैं अभी अपनी आँखों से देख कर आया हूँ। मैं आपके पास क्षमायाचना के लिए उपस्थित हुआ था। पर उस आपके पुत्र को सामने जीवित देखकर मुझे विश्वास नहीं हो रहा है।"

"राजन, यह बात सच है कि आपने मेरे पुत्र पर बाण चलाया, पर हमारे प्राण भगवान के लिए अर्पित हैं। इस तरह के आघात हमारी कोई हानि नहीं कर सकते।" मुनि अरिष्टनेमि ने मन्दस्मितपूर्वक उत्तर दिया।

परीक्षा

रामपुर एक छोटा-सा कस्बा था। इसके आसपास के इलाकों में बहुत से खेत-खलिहान, बाग-बगीचे थे। जगदीश इसी कस्बे का निवासी था। सब लोग उसकी इज्जत करते थे। सुशीला जगदीश की इकलौती बेटी थी। उसकी माँ उसे अबोध बचपन में छोड़ स्वर्ग सिधार गयी थी। पिता ने उसे अत्यन्त लाड़-प्यार से पाला था। अब सुशीला सुन्दर, सुयोग्य युवती थी। जगदीश उसके विवाह के लिए एक सुयोग्य वर की खोज में था।

एक बार पड़ोसी गाँव से जगदीश के बचपन के मित्र रामभद्र ने यह ख़बर भेजी कि वह आकर उससे मिल जाये। जगदीश ने जाते हुए बेटी को सावधान किया, "बेटी, मैं कल सुबह लौट आऊँगा। रात को तुम सारे किवाड़ अच्छी तरह बंद करके सोना, भूलना नहीं !"

"पिताजी, तुम निश्चिंत होकर जाओ ! मैं कोई बच्ची थोड़ी रह गयी हूँ !" सुशीला ने पिता को आश्वस्त कर विदा किया।

सुशीला ने सब दरवाज़ों को भलीप्रकार बंद किया और सो गयी। आधीरात के वक्त उसे दरवाज़े पर दस्तकों की आवाज़ सुनाई दी। 'इस वक्त कौन आया होगा ?' यह सोचकर सुशीला ने खिड़की खोलकर बाहर झाँक कर देखा। बाहर बारिश में भीग रहा एक बूढ़ा दरवाज़े की आड़ में खड़ा हुआ था।

सुशीला को खिड़की पर देखकर बूढ़ा बोला, "आज की रात सिर छुपाने की जगह देकर पुण्य कमाओ, बेटी ! मैं इस गांव में पराया हूँ। ऊपर से यह बारिश ! शरीर भी दुख रहा है।"

सुशीला को उस बूढ़े पर दया आगयी। उसने तुरन्त किवाड़ खोल दिये और बोली, "बाबा, अन्दर आजाओ !"

बूढ़ा घर के अन्दर आगया। सुशीला ने उसे बदन पोंछने के लिए एक अंगोछा दिया। बूढ़े ने

शरीर पोंछकर चारों तरफ़ निगाह डाली, फिर पूछा— "इस इतने बड़े घर में रात के वक्त तुम अकेली हो ?"

सुशीला ने कहा, "मेरे पिताजी पास के गाँव में गये हैं, सुबह को वापस आजायेंगे।" फिर पूछा, "बाबा, संकोच न करना। बताओ, खाना खाया है कि नहीं ?"

बूढ़े ने सिर झुकाकर नकार की। सुशीला ने बचा-खुचा खाना रसोई से निकाला और बूढ़े को परोस दिया। बूढ़े ने बड़ी सन्तुष्टि के साथ खाना खाकर पानी पिया।

सुशीला सामने के कमरे में गयी और चटाई बिछाकर बूढ़े के सोने के लिए बिस्तर का प्रबन्ध करने लगी। तब हठात् उसे अपनी गरदन पर ठंडा-सा स्पर्श महसूस हुआ। उसने झट पीछे की ओर मुड़कर देखा। बूढ़े के हाथ में चमकती हुई दस इंची छुरी थी। वह कड़ककर बोला, "देख छोकरी, तू चुपचाप घर के सारे गहने व रुपया दे दे। अब तुम्हें कोई बचा नहीं सकता ज़रा भी चूँ-चाँ करने की कोशिश की तो जान से हाथ धो बैठेगी। समझी.!"

सुशीला ने ऐसी किसी घटना की कल्पना भी नहीं की थी। वह कुछ डरी और चकित रह गयी। लेकिन जल्दी ही उसने अपने पर क़ाबू पा लिया और कठोर होकर बोली, "तुम तो आश्रय देनेवाले के साथ ही द्रोह करने पर तुल गये ? मैंने तो सुना था कि चोर-डाकुओं का हृदय भी कृतज्ञता से ख़ाली नहीं होता।"

बूढ़ा दाँत पीस कर बोला, "मैं क्या यहाँ आश्रय के लिए आया था ? तुम अगर दरवाज़ा न खोलतीं तो मैं उसे तोड़ डालता। पर इन फालतू बातों में क्या रखा है ? जल्दी करो ! सारा रुपया-पैसा और गहने गठरी में बाँधकर मेरे हवाले करो !"

सुशीला ज़रा भी विचलित नहीं हुई। बोली, "मैंने तुम्हें खाना तो अपने हाथ से परोस कर खिला दिया है, पर धन व गहनों की गठरी बाँधने के लिए मैं तैयार नहीं हूँ। देखो, उस कमरे के सन्दूक़ में सब कुछ रखा है। तुम अपने हाथ से गठरी बाँधो और यहाँ से चलते बनो !"

बूढ़ा बड़ी फुरती से सुशीला के बताये हुए

कमरे के अन्दर चला गया। सुशीला विद्युत की गति से उसके पीछे गयी और उसने किवाड़ बन्द कर बाहर से कुंडी लगा दी। बूढ़ा दो-एक क्षण रुककर किवाड़ पर धक्के देने लगा।

सुशीला यह सोचकर अपने कमरे में जाकर लेट गयी कि इस आधी रात के वक्त पास-पड़ोस वालों की नींद में ख़लल क्यों डाली जाये !

सुबह हुई। दरवाज़े पर दस्तकों की आवाज़ सुनकर सुशीला जाग उठी। उसने सोचा कि उसका पिता वापस आ गया है। उसने तुरन्त दरवाज़ा खोल दिया। ड्योढ़ी के पास एक सुन्दर युवक खड़ा हुआ था। उसकी क़ीमती वेशभूषा यह बता रही थी कि वह काफ़ी धनीमानी व्यक्ति है।

सुशीला ने उस युवक से पूछा, "आप कौन हैं ? कहाँ से आये हैं ? और क़िससे मिलना चाहते हैं ?"

युवक ने मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहा, "मुझे आनन्द कहते हैं। कल रात बारिश में भीगता हुआ एक बूढ़ा तुम्हारे यहाँ आश्रय पाने के लिए आया था !"

"जी हाँ, आया था। मैंने उसे आश्रय देकर खाना खिलाया और उसने मुझे छुरी दिखाकर मुझसे धन एवं गहनों की माँग की। मैंने उसे सामने वाले कमरे में बन्द कर रखा है। पर आपका उस चोर से क्या सम्बन्ध है ?" सुशीला ने पूछा।

आनन्द खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला, "वह चोर नहीं है, वह तो मेरा नौकर है।"

"आपका नौकर हमारे घर में चोरी करने आता है तो वह चोर नहीं तो और क्या है ?" सुशीला ने क्रुद्ध होकर पूछा।

सुशीला का क्रोध देखकर भी आनन्द के चेहरे पर शिकन नहीं आयी। वह मुस्कराते हुए बोला, "वह सचमुच ही चोरी करने नहीं आया था। यह एक नाटक है। हमने तुम्हारी परीक्षा लेने के ख्याल से यह नाटक रचा था।" कहकर आनन्द ने सारी कहानी कह सुनायी।

आनन्द एक लखपति युवक था। एक सप्ताह पहले उसने अपने मित्र के घर एक

विवाहोत्सव में सुशीला को देखा था। उसकी सुन्दरता और सुसंस्कृत बात-व्यवहार से आनन्द बहुत आकर्षित हुआ। आनन्द अपने माता-पिता का इकलौता पुत्र था। उसके चारों तरफ धन-ऐश्वर्य का अम्बार था। सुशीला को लेकर उसके मन में यह शंका हुई कि इतने धनाढ्य और आधुनिक रहन-सहन वाले घर में बहू के रूप में वह योग्य प्रमाणित होगी कि नहीं। सुशीला की योग्यता की परीक्षा लेने के लिए उसने उसे अकेली देखकर अपने नौकर रामू के द्वारा यह नाटक रचा था।

सारी बातें सुनकर सुशीला को आश्चर्य के साथ-साथ क्षोभ भी हुआ। पर आनन्द ने इस ओर ध्यान दिये बगैर कहा, "सुशीला, तुम इस परीक्षा में सौ प्रतिशत उत्तीर्ण हुई हो।"

"सो कैसे?" सुशीला ने अपने क्रोध पर क़ाबू करते हुए पूछा।

आनन्द ने रंगमंच के अभिनेता के लहज़े में कहा, "बूढ़े को आश्रय देकर तुमने अपनी उदारता व्यक्त की। छुरी दिखाने पर तुमने साहस से काम लिया और उसको बन्द करके तुमने अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया है। तुम्हारे अन्दर मेरी पत्नी बनने की पूरी योग्यता है। अब तुम्हारे साथ विवाह करने में मेरे अन्दर कोई हिचक बाकी नहीं रह गयी है।"

"नौकर के द्वारा यह स्वांग रचने की क्या ज़रूरत थी? तुम खुद भी अच्छे नाटक बाज़ हो और अपनी इस विद्या से लाखों रुपये कमा सकते हो।" यह कहकर सुशीला ने कमरे की कुंडी खोलकर आनन्द के नौकर रामू को बाहर निकाला। रामू आँखें मलता हुआ अपने मालिक आनन्द के पीछे खड़ा होगया।

सुशीला अब आनन्द से फिर बोली, "आनन्दजी, आपने मेरी योग्यता की परीक्षा ली और उसका परिणाम भी घोषित कर दिया। मेरी दृष्टि से ये दोनों ही मूर्खतापूर्ण काम हैं। अब मेरी बात आप कान खोलकर सुनें! ऐसी बेतुकी परीक्षा लेने वाले आपको मैं पुलिस के हाथों में नहीं सौंप रही हूँ, यह मेरी उदारता है। आपके जैसे लखपति को तुरन्त यहाँ से न जाने पर मैं अपमानित करने की धमकी दे रही हूँ, यह मेरा साहस है। और, आपके साथ विवाह करने को

मैं इनकार कर रही हूँ, इसमें मेरी बुद्धिमत्ता है। आप मेरी उदारता, मेरे साहस और मेरी बुद्धिमत्ता का अन्दाज़ लगाइये और तुरन्त यहाँ से चले जाइये !" यह कहकर उसने द्वार की ओर संकेत किया ।

सुशीला के मुँह से यह उत्तर सुनकर आनन्द और उसके नौकर रामू का चेहरा फक़ पड़ गया । वे दोनों सिर झुकाकर निकले और द्वार पर खड़े सुशीला के पिता से नज़र मिलाये बिना चले गये ।

जगदीश ने बाद की सारी बातें सुन ली थीं । उसने सुशीला से कहा, "बेटी, तुम ज़रा जल्दबाज़ी कर गयी हो ! एक लखपति युवक विवाह का आग्रह लेकर तुम्हारे पास आया तो तुमने उसे डांटकर भेज दिया ?"

"पिताजी, उसे धन का अहंकार है । वह सोचता है कि उसी की इच्छा सर्वोपरि है और मेरी इच्छा का कोई मूल्य नहीं है। मैं उसे पसन्द आगयी, इसलिए उसने मेरी परीक्षा ली । इस तरह के लोगों का यह ख्याल होता है कि वे धन के बल पर सब कुछ ख़रीद सकते हैं ।" सुशीला ने कहा ।

जगदीश कुछ देर विचारमग्न खड़ा रहा, फिर बोला, "बेटी, तुम मेरे बचपन के मित्र रामभद्र को तो जानती ही हो और शायद, उनके पुत्र प्रभाकर को भी तुमने देखा है ?"

"हाँ, पिताजी !" सुशीला ने कहा ।

"कल शाम वहीं से वह आदमी आया था। रामभद्र तुम्हें अपनी बहू बनाना चाहते हैं । वे तुम्हारी राय जानना चाहते हैं । प्रभाकर योग्य और परिश्रमी है । उनके पास चार एकड़ ज़मीन है । उसमें प्रभाकर अच्छी फसल पैदा करता है । घर धन-धान्य से पूर्ण है । क्या तुम्हें यह विवाह स्वीकार है ?" जगदीश ने सुशीला से पूछा ।

सुशीला ने मुस्कराते हुए स्वीकृति में अपना सिर हिला दिया ।

बचपन के मित्र को समधी बनते देख जगदीश को भी अत्यन्त प्रसन्नता हुई ।

ग़रीबी का मापदंड

सिन्धु देश पर उस समय राजा त्रिगुणसेन का शासन था। राजा त्रिगुणसेन की राजसभा में अनेक कवि, कलाविद एवं पंडित थे तथा राजधानी के सभी प्रमुख नागरिकों का आना-जाना था। वे सभी अपने राजा की भूरि-भूरि प्रशंसा करते और इस बात का बखान करते कि राजा त्रिगुणसेन अपने पूर्वजों के समान ही महान और यशस्वी राजा हैं।

एक दिन महामंत्री मार्तण्ड शर्मा ने राजा से कहा, "महाराज, कवि, पंडित एवं नगर के प्रमुख जन आपके शासन की प्रशंसा दिल खोलकर करते हैं। पर हमें साधारण जनता के विचारों की जानकारी नहीं है। क्यों न हम एक बार छद्मवेश में देश का भ्रमण करें और राज्य के प्रति आम आदमी के विचार को जान लें ?"

राजा त्रिगुणसेन ने अपनी सम्मति दी और दूसरे दिन मंत्री के साथ छद्मवेश धारण कर देशाटन पर निकल पड़े। वे दोनों एक गली से होकर गुज़र रहे थे कि एक भिखारी पर उनकी दृष्टि पड़ी। मंत्री मार्तण्ड शर्मा ने राजा से कहा, "महाराज, क्यों न हम इस भिखारी को बातचीत के लिए उकसायें और सर्वप्रथम इससे ही आपके शासन के बारे में कुछ जानने की कोशिश करें ?"

राजा ने किंचित् अनमना भाव दिखाकर पूछा, "मंत्रिवर, ऐसे भिखारियों और याचकों से प्रश्न करके हम क्या समझ सकते हैं ?"

मार्तण्ड शर्मा विनयपूर्वक बोला, "महाराज, हम आपके शासन के बारे में प्रजा की राय जानने के लिए निकले हैं। यह भिखारी भी तो आपकी प्रजा है। हमें जहाँ तक हो सके, हर धंधे के लोगों की राय जान लेनी चाहिए।"

राजा त्रिगुणसेन ने स्वीकार किया, फिर आगे बढ़कर भिखारी से पूछा, "सुनो, यह तो बताओ कि तुम भीख क्यों माँगते हो ?"

राहगीर वेशधारी राजा का सवाल सुनकर

विनायक राव

भिखारी बड़ी लापरवाही से बोला, "यह भी कोई सवाल है कि भीख क्यों माँगता हूँ ? मैं यह धंधा पिछले पच्चीस वर्षों से करता आ रहा हूँ ।"

राजा भिखारी के जवाब से कुछ सन्तुष्ट हुआ फिर मंत्री से बोला, "आपने सुना ? यह मेरे दादा के ज़माने से भिखारी बना हुआ है ।"

भिखारी ने राजा की बात सुनी तो खीजकर बोला, "महाशय, मैं नहीं जानता कि आपके दादा कौन हैं ? पर यह बात सही है कि मैं पिछले पच्चीस वर्षों से यही पेशा करता आ रहा हूँ । भीख तो मैं अवश्य माँगता था, पर इधर कुछ वर्षों से मैं असली भिखारी होने का अनुभव पा सका ।"

"अच्छा ! कैसा अनुभव ?" राजा ने पूछा ।

"आप मेरा विचार जानना चाहते हैं तो मैं अपना सच्चा अनुभव बता देता हूँ । आप ग़ौर देकर सुनें ! पच्चीस वर्ष पहले जब मैं भीख माँगता था तो एक घंटे के अन्दर ही मेरी झोली भर जाती थी और ताँबे के पाँच-छह सिक्के भी मिल जाते थे । लेकिन कुछ वर्ष बाद हालत यह न रही और इतना पाने में दो-तीन दिन लगने लगे । पर अब स्थिति और भी बदतर होगयी है । सात दिन से गली-गली ख़ाक छान रहा हूँ पर आधी झोली भी नहीं भरी है । किसी ने एक सिक्का तक फेंकने का पाप नहीं किया ।" यह कहकर भिखारी अपने रास्ते चला गया ।

राजा थोड़ी देर विचारमग्न खड़े रहे । फिर मौन तोड़कर मंत्री से बोले, "मंत्रिवर, भिखारी की बात सुनने के बाद मुझे ऐसा लगता है कि जनता के अन्दर धार्मिक बुद्धि एवं दानशीलता की भावना क्रमशः घटती जा रही है । आपकी क्या राय है ?"

मंत्री मार्तण्ड ने कहा, "महाराज, भिखारी का वक्तव्य जनता में धर्मबुद्धि घटने की ओर संकेत नहीं करता । उसने यह बताने की चेष्टा की है कि इधर पच्चीस वर्षों में उसकी हालत दिन पर दिन गिरती चली गयी है और वह कितना ग़रीब हो गया है !"

मंत्री की बात सुनकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ, बोले, "महामंत्री, यह आप क्या कह रहे हैं ? भिखारी का ग़रीब होना कैसा ?"

"महाराज, भिखारी ने स्पष्ट बताया है कि आपके दादा के ज़माने में अर्थात् पच्चीस वर्ष पहले उसने कितना सुखमय जीवन बिताया था । उसने यह भी कहा कि क्रमशः उसकी आमदनी घटती गयी और आज वह कितनी शोचनीय दशा को पहुँच गया है !" मंत्री ने उत्तर दिया ।

"मंत्रिवर, इसीलिए तो मैं कह रहा हूँ कि जनता में धार्मिक वृत्ति और दानशीलता की कमी हो गयी है ।" राजा ने कहा ।

"महाराज, क्षमा कीजिये । भिखारी की बात से ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता । आपके विचार के अनुसार अगर समाज में इन मूल्यों का ह्रास होगया होता तो हमें सर्वत्र धोखा, दग़ा, लूट-खसोट आदि के दर्शन होते । पर राज्य में कहीं ऐसी अराजकता दिखाई नहीं देती है ।" मंत्री बोला ।

"तो बताइये, भिखारी की इस दयनीय दशा का क्या कारण है ?" राजा ने पूछा ।

"इसका एकमात्र कारण यही है कि इन पच्चीस वर्षों के भीतर जनता की आर्थिक स्थिति क्रमशः गिरती गयी है । फिर भी जनता बड़ी सहनशीलता के साथ अच्छे दिनों की प्रतीक्षा कर रही है । मेरा विचार है कि भिखारी की ग़रीबी जनता की दरिद्रता का मापदण्ड है ।" मंत्री ने स्पष्ट किया ।

मंत्री मार्तण्ड शर्मा के स्पष्टीकरण से राजा त्रिगुण सेन वास्तविक तथ्य को हृदयंगम कर सका । उसने समझ लिया कि राजधानी में बैठकर, कवि-पंडितों और अमीर-उमरावों की प्रशंसा सुनकर वह जनता की वास्तविक स्थिति से अनभिज्ञ रह गया है ।

इसके बाद राजा त्रिगुणसेन ने मंत्री मार्तण्ड शर्मा के साथ सारे राज्य का भ्रमण किया और राजा को प्रजा की समस्याओं को समझने में सफलता मिली । इसके बाद राजा त्रिगुणसेन ने अपने योग्य मंत्री के सहयोग से अनेक ऐसे आयोजन किया, जिनसे प्रजा संकट-मुक्त हुई और खुशहाल होकर राजा त्रिगुण सेन के समर्थ शासन का गुणगान करने लगी ।

२८

[शिवपुर की सीमा पर चंद्रवर्मा तथा सेनापति धीरमल्ल ने अपनी सेनाओं के साथ एक पहाड़ी घाटी में सर्पकेतु का सामना किया। विकट स्थिति देखकर चंद्रवर्मा ने शत्रुपक्ष में मिले माहिष्मती एवं वीरपुर के सैनिकों को सम्बोधित किया और उन्हें सर्पकेतु के षडयंत्र के बारे में बताया। सर्पकेतु के अधिकांश सैनिक चंद्रवर्मा के पक्ष में आगये। बाक़ी सैनिकों के साथ सर्पकेतु भागने लगा। तब चंद्रवर्मा ने उसका पीछा करने के लिए अपने कुछ सैनिकों को भेजा। आगे पढ़िये...]

सूर्य अस्ताचल की ओर तेज़ी से बढ़ रहा था। तभी चंद्रवर्मा के द्वारा भेजे गये सैनिकों में से दो सैनिक लौट कर आये और बोले, "महाराज, सर्पकेतु की सेना कहीं दिखाई नहीं दे रही है। पर उनके पदचिन्हों से ऐसा पता लगता है कि वे सैनिक पश्चिम दिशा में भाग गये हैं!"

यह समाचार सुनकर चंद्रवर्मा धीरमल्ल की ओर मुड़कर बोला, "धीरमल्ल, मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि सर्पकेतु माहिष्मती नगर की ओर नहीं भागा है बल्कि वह काँसे के क़िले की तरफ़ चला गया है!"

सेनापति धीरमल्ल तथा सुबाहु ने अपनी सहमति प्रकट की। पर अब उनके सामने यह समस्या थी कि माहिष्मती नगर की ओर बढ़ा जाये या कांसे के क़िले की तरफ़ बढ़ते हुए सर्पकेतु का पीछा किया जाये।

थोड़ी देर विचार-विमर्श करने के बाद उन

लोगों ने यह निश्चय कर लिया कि काँसे के क़िले की दिशा में जाकर पहले सर्पकेतु का ख़ात्मा करना चाहिए ।

तत्काल सभी सैनिकों को पश्चिम दिशा की ओर बढ़ने का आदेश दे दिया गया । कुछ ही देर में सारी सेना सन्नद्ध होकर निकल पड़ी । चंद्रवर्मा, धीरमल्ल, सुबाहु आदि के निर्देश में सारी सेना सर्पकेतु के सैनिक-दल के पदचिन्हों के आधार पर आगे बढ़ रही थी । पहाड़ से निकलकर एक वनभाग पार कर सब एक बड़ी नदी के किनारे पहुँचे । उस नदी का विशाल पाट देखकर चंद्रवर्मा चकित होगया । उसके सामने नदी पार करने की समस्या थी । वह सोच रहा था कि सर्पकेतु और उसके सैनिकों ने नदी कैसे पार की ?

चंद्रवर्मा इसी चिन्ता में डूबा हुआ था कि तभी पास के पेड़ की शाखा से एक तीन सिरोंवाला सर्प फूत्कार करता हुआ धम्म से पृथ्वी पर गिरा । सब लोग भय और आशंका से उस विशाल सर्प की ओर ताकने लगे । अचानक उस सर्प ने मानव रूप धरकर चिल्लाकर कहा, "चंद्रवर्मा !" और बड़े वेग से वह चंद्रवर्मा की तरफ़ दौड़ा ।

अपना नाम सुनकर चंद्रवर्मा भी चौंक उठा और एक ही छलांग में आगे कूद कर उसने उस मानव का हाथ पकड़ कर कहा, "कालकेतु ! तुम !"

"हाँ, चंद्रवर्मा ! आपकी कृपा से कालकेतु का रूप पानेवाला कालनाग मैं ही हूँ, जादूगरनी कापालिनी का सेवक ! अब विलम्ब करने की आवश्यकता नहीं है । आपके शत्रु सर्पकेतु ने थोड़ी देर पहले ही अपनी सेना सहित नदी को पार किया है । नदी पार करने के लिए सर्पकेतु ने लट्ठों के जिस विशाल बेड़े का उपयोग किया था, उसे मैं पहले ही उस पार से इस पार ले आया हूँ । देखिए, वह पेड़ों की ओट के उस दलदली भाग में छिपा रखा है !" कालकेतु ने कहा ।

इसके बाद कालकेतु चंद्रवर्मा का हाथ पकड़ कर उसे पेड़ों की ओट में ले गया और बोला, "चंद्रवर्मा, मैं आपकी मदद करने के

विचार से शंखु के पर्वत से सीधा यहाँ आया हूँ। कई दिन पहले कापालिनी का देहान्त हो गया है। मृत्यु के पूर्व उसने मुझे भूत और वर्तमान को दशनि वाला काँच का गोलक दिया और यह मानव-अस्थि दी। इन्हीं की मदद से मैं यह जान सका कि आप कहाँ हैं और किस स्थिति में हैं। मैं इसी के सहारे आप तक पहुँचा हूँ। यह गोलक समीप में ही है। आप देख लें कि आपका शत्रु और इसीलिए मेरा भी शत्रु सर्पकेतु इस वक्त कहाँ है और क्या कर रहा है?" यह कहकर कालकेतु ने पेड़ की ओट में से काँच का गोलक बाहर निकाला और कोई मंत्र जाप करके उसे मानव-अस्थि से स्पर्श कर दिया।

दूसरे क्षण उन्हें यह अद्भुत दृश्य दिखाई दियाः

सूर्य की काँति में काँसे के क़िले की दीवारें चमाचम चमक रह थीं। क़िले की चहारदीवारी के उत्तरी मुखद्वार को खोल दिया गया था और वहाँ कुछ सैनिक पहरा दे रहे थे।

क़िले के अन्दर की बड़ी-बड़ी इमारतें जो खंडहर बन चुकी थीं, उनके भग्नावशेषों में सर्पकेतु के सैनिक स्वेच्छापूर्वक संचार करते हुए अपार सोना और रत्नादि लूट रहे थे।

"चंद्रवर्मा, यह है हमारे दुश्मनों की तस्वीर। बहुत से लोगों का विचार है कि काँसे के क़िले की दीवारों से समुद्र-जल स्पर्श करता रहता है, पर यह बात सही नहीं है। क़रीब सौ वर्ष पूर्व समुद्र में तूफ़ान आया था। उसने काँसे के क़िले को जलमग्न कर दिया था। पर कुछ समय बाद समुद्र काँसे के क़िले की दीवारों को छोड़कर लगभग एक कोस पीछे हट गया।" कालकेतु ने कहा।

कालकेतु के मुँह से यह वृत्तान्त सुनकर चंद्रवर्मा अत्यन्त उत्साहित हो उठा और अपने सैनिकों के साथ नदी पार करने की तैयारी में लग गया। कालकेतु ने पहले से ही तैयार रखे लट्ठों के बेड़े को नदी में उतार दिया। इस पर चंद्रवर्मा ने अपनी पूरी सेना के साथ नदी पार की।

कालकेतु एक घोड़े पर सवार होकर आगे

रहकर मार्ग-दर्शन कर रहा था। उसके पीछे सारी सेना तेज़ गति से काँसे के क़िले की तरफ़ बढ़ रही थी। एक घंटे बाद उन्हें क़िले की गगन चुंबी बुर्जियां दिखाई दीं। वे धीरे-धीरे काँसे के क़िले के पास पहुँचे और उत्तरी द्वार की ओर बढ़ने लगे। पर तब तक क़िले का द्वार बन्द हो चुका था।

चंद्रवर्मा सेनापति धीरमल्ल, सुबाहु एवं कालकेतु को साथ लेकर एक-एक द्वार के पास गया, पर वे द्वार मज़बूत काँसे से बने हुए थे। ऐसे सुदृढ़ द्वारों को तोड़ना असंभव कार्य था। फिर क़िले के अन्दर कैसे प्रवेश किया जाये?

चंद्रवर्मा अपने साथियों के साथ इसी समस्या पर सोच-विचार कर रहा था कि इतने में क़िले की दीवार पर से सर्पकेतु की गर्जना सुनाई दी। उसके आस पास बड़ी-बड़ी टोकरियां, बोरे आदि लिये हुए कुछ सैनिक खड़े थे।

सर्पकेतु ने नीचे एकत्रित हुए चंद्रवर्मा के सैनिकों से ऊँचे स्वर में कहा, "मेरे पास खड़े इन सैनिकों को देख रहे हो? इनके हाथों की टोकरियों और बोरों में अपार धन है। ये सुवर्ण, रत्न और आभूषणों से भरे हुए हैं। चंद्रवर्मा को छोड़ दो और मेरे पक्ष में आजाओ। मैं यह सारा धन आप लोगों को बाँट दूँगा। जो लोग मेरे इस प्रस्ताव को स्वीकार कर मेरे पक्ष में आना चाहते हैं, उनके लिए क़िले के द्वार खोल दिये जायेंगे। प्रमाण के लिए मैं तुम्हें दिखाता हूँ कि मेरे पास कितना धन है!"

सर्पकेतु के इशारे पर उसके सैनिकों ने बोरों के मुँह खोल दिये, टोकरियों को उलटा कर
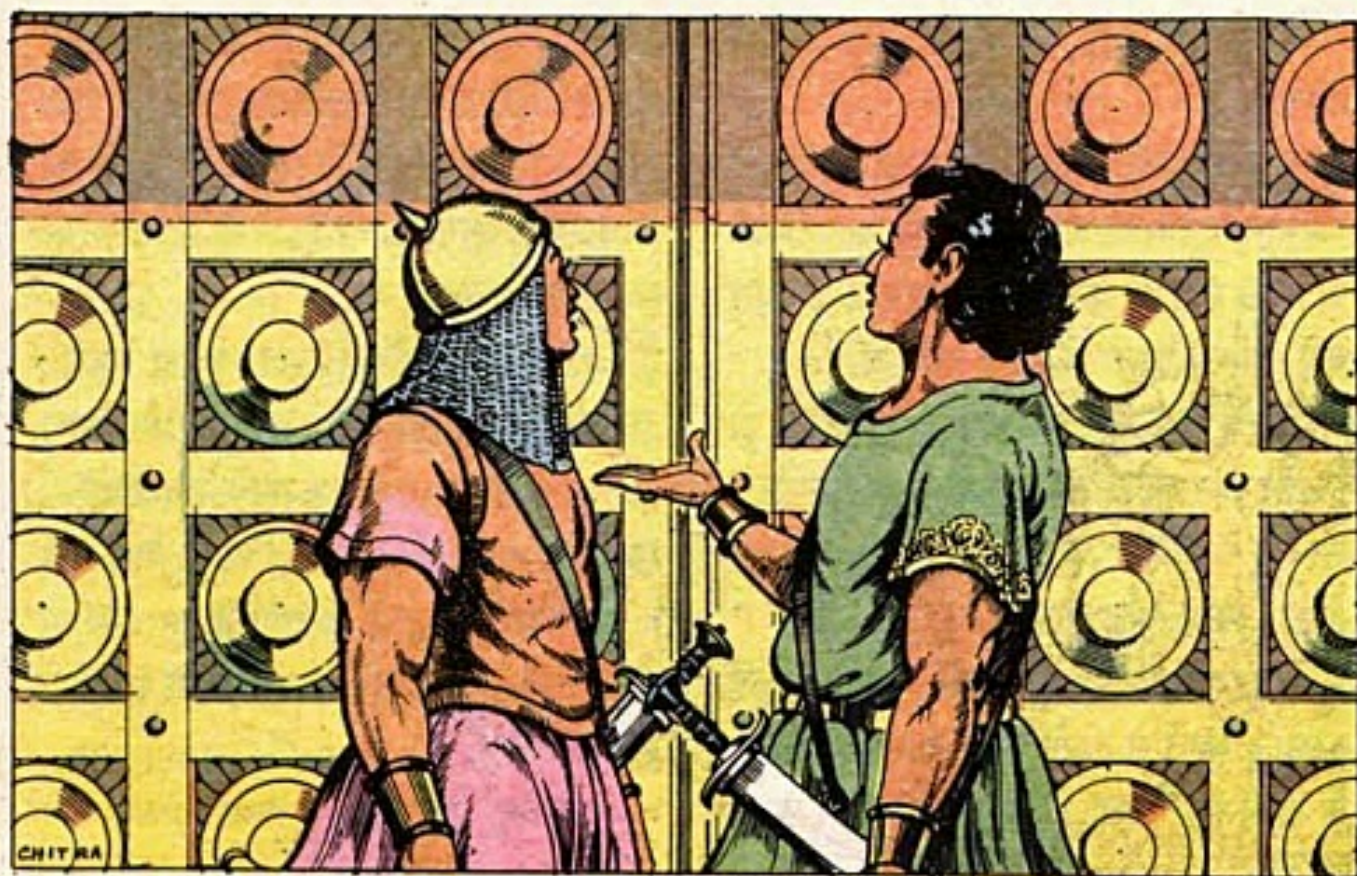
दिया। चंद्रवर्मा के सैनिकों पर सुवर्ण, रत्न और आभूषणों की बौछार होने लगी। चंद्रवर्मा की सेना में खलबली मच गयी और वे उस धन को लूटने-बटोरने के लिए एक दूसरे को धक्का देते हुए लड़ने लगे।

चंद्रवर्मा समझ गया कि स्थिति अधिक ख़तरनाक होने जा रही है। उसने सुबाहु से कहा, "सुबाहु! तुम वीरपुर के विश्वसनीय सैनिकों को समझाकर उन्हें लेकर इस प्रकार का नाटक करो कि तुम शत्रुपक्ष से मिलने जा रहे हो और क़िले का द्वार खोलने के लिए चिल्लाओ! अगर सर्पकेतु तुम्हारी बातों पर विश्वास कर क़िले का द्वार खोल देता है तो तुम तुरन्त क़िले के अन्दर घुस जाना! फिर बाक़ी सेना के साथ मैं एवं धीरमल्ल प्रवेश करेंगे। अगर हम क़िले के अन्दर पहुँच जाते हैं तो सर्पकेतु का नाश कठिन नहीं रहेगा।"

चंद्रवर्मा की बात को सुबाहु ने भली प्रकार समझ लिया। वह वीरपुर के सेनादल के पास पहुँचा और उनसे गुप्त रूप से मशविरा करने लगा। देखते-देखते चंद्रवर्मा की सेना का एक बहुत बड़ा हिस्सा अलग होगया और सर्पकेतु की जय जयकार करने लगा।

इसके बाद वह सैनिक दल क़िले के द्वार की ओर बढ़ा। कुछ सैनिक उस दल को रोकने का स्वांग रच उससे झूठमूठ का युद्ध करने लगे।

सर्पकेतु ने अपनी जय-जयकार सुन और यह प्रत्यक्ष दृश्य देखकर विश्वास कर लिया कि चंद्रवर्मा की सेना में फूट पैदा होगयी है। वह क़िले की दीवार पर विकट अट्टहास कर चिल्ला

पर नियुक्त सैनिकों को चेतावनी दी कि वे दीवारों पर ढेर पड़े पत्थरों को बरसा कर चंद्रवर्मा की सेना को तहस-नहस कर दें। पत्थरों की वर्षाहोते देख कर चंद्रवर्मा गरज उठा, "सुबाहु, तुम किसी तरह क़िले की दीवार पर पहुँचो। अगर संभव हो तो सर्पकेतु को ज़िन्दा पकड़ो, वरना तलवार के घाट उतार दो!"

सुबाहु ने अपने साथ कुछ चुने हुए सैनिक लिये और पीछे की तरफ़ से क़िले के निकले हुए पत्थरों के सहारे किसी तरह दीवार पर पहुँचा। पर सर्पकेतु को बन्दी बनाना आसान काम नहीं था। सुबाहु को सैनिकों के साथ क़िले की दीवार पर देखकर सर्पकेतु को निश्चय होगया कि अब उसका बचना मुश्किल है।

सामने खड़ी मौत को देखकर उसका रूप विकराल हो उठा। वह एक राक्षस की तरह गरजता हुआ सामने आये शत्रुसैनिकों को गाजर-मूली की तरह काटने लगा। क़िले की दीवार पर वात्याचक्र की तरह दौड़ते हुए सर्पकेतु के वीभत्सरूप को देख चंद्रवर्मा के सैनिक काँप उठे।

तभी कालकेतु की आवाज़ गूँज उठी, "चंद्रवर्मा, सर्पकेतु का सामना कर सके, ऐसा अकेला योद्धा मैं ही हूँ। वह मुझे देखकर क़िले की दीवार पर से भारी चट्टान की भाँति नीचे गिरेगा। अगर आप उसे ज़िन्दा पकड़ना चाहते

उठा, "क़िले के द्वार खोल दो! शत्रुसेना का बड़ा हिस्सा हमारे पक्ष में आगया है। मैं कुछ ही क्षणों में चंद्रवर्मा और उसके साथियों को तलवार के घाट उतार देता हूँ।" सर्पकेतु का आदेश पाकर उसके साथियों ने क़िले का द्वार खोल दिया।

अब तो आँख झपकने की देर थी। क़िले में प्रवेश करते ही सुबाहु की सेना ने शत्रु सैनिकों का सफाया करना शुरू कर दिया। इस बीच चंद्रवर्मा तथा धीरमल्ल भी क़िले के अन्दर आगये। उनके हमले से घबराकर सर्पकेतु की सेना तितर-बितर हो गयी।

'मेरे साथ धोखा हुआ है' यह सोचते ही सर्पकेतु उबाल खा गया। उसने क़िले की दीवार

हैं तो पृथ्वी पर गिर कर टुकड़े-टुकड़े हो जाने के पहले ही आप अपने सैनिकों की सहायता से उसे बीच में थाम लीजिए ।" इतना कहकर कालकेतु तलवार खींचकर एक ही छलांग में क़िले की दीवार पर जा पहुँचा ।

कालकेतु को देखकर सर्पकेतु ने ज़ोर की हुंकार की और उस पर हमला कर बैठा । कालकेतु ने घूमकर अपने को उस वार से बचाया और अपनी तलवार आगे कर सर्पकेतु पर उछल पड़ा और भयंकर गर्जना कर बोला, "सर्पकेतु, तुम इस समय कालकेतु का सामना कर रहे हो ! कालकेतु का अर्थ है तीन सिरोंवाला महाकाल सर्प !" दूसरे ही क्षण कालकेतु महानाग के रूप में परिवर्तित होगया और तीनों सिरों को ऊपर उठाकर फूत्कार करता हुआ सर्पकेतु पर झपटा ।

सर्पकेतु को काटो तो खून नहीं । वह भय के कारण चीत्कार कर उठा और क़िले की दीवार से औंधे मुँह नीचे गिर पड़ा । चंद्रवर्मा उसे पकड़ने के लिए दौड़ा, लेकिन तब तक सर्पकेतु के प्राण पखेरू उड़ चुके थे । सर्पकेतु के बचे हुए सैनिकों ने चंद्रवर्मा की अधीनता स्वीकार कर ली ।

कालकेतु ने काँसे के क़िले को अपना निवास बनाने की इच्छा प्रकट की । चंद्रवर्मा ने अपनी स्वीकृति दे दी । वह रात चंद्रवर्मा ने काँसे के क़िले के खंडहरों में बितायी । सारी सेना ने

विजय का उत्सव मनाया ।

सुबह होते ही चंद्रवर्मा ने काँसे के क़िले की अपार सम्पदा के साथ रुद्रपुर की ओर प्रस्थान किया । चंद्रवर्मा धीरमल्ल, सुबाहु और देवल तथा अपनी पूरी सेना केसाथ जब रुद्रपुर के निकट पहुँचा तो उसे वहाँ के विशिष्ट नागरिकों ने सूचना दी कि राजा शिवसिंह को चंद्रवर्मा का वास्तविक परिचय मिल गया है और वह पहाड़ों में भाग गया है तथा रुद्रपुर में इस समय कोई राजा नहीं है । चंद्रवर्मा ने सब समाचार सुना तो अत्यन्त सोच-विचार के बाद वीर युवक देवल को वहाँ का राजा बनाना उचित समझा ।

देवल का राज्याभिषेक कर चंद्रवर्मा अपने सैन्य के साथ माहिष्मती नगरी की ओर बढ़ा ।

वह जब माहिष्मती से चन्द कोस की दूरी पर पहुँचा तो नगरवासियों को दुष्ट सर्पकेतु की मृत्यु और चंद्रवर्मा की विजय का समाचार मिला। नागरिक पहले ही सर्पकेतु से प्रसन्न नहीं थे। उन्होंने चंद्रवर्मा को हृदय से अपना राजा स्वीकार किया और बाजे-गाजों के साथ चंद्रवर्मा की अगवानी करने निकले। उन्होंने चंद्रवर्मा से निवेदन किया कि वह राज्य की बागडोर संभाले। पर चंद्रवर्मा ने इस आग्रह को स्वीकार नहीं किया और कहा कि उनके वास्तविक राजा महाराज यशोवर्द्धन के पुत्र तपोवर्द्धन ही हैं।

तपोवर्द्धन माहिष्मती नगर के निकटवर्ती अरण्य में एक कुटी बनाकर रह रहा था और तपस्वियों का जीवन व्यतीत करता था। चंद्रवर्मा माहिष्मती के विशिष्ट नागरिक-मंडल के साथ तपोवर्द्धन के पास गया और उससे सिंहासनारूढ़ होने की प्रार्थना की। तपोवर्द्धन ने चंद्रवर्मा के आग्रह का तिरस्कार करते हुए कहा, ''यह वन-प्रदेश ही मेरा राज्य है। मैंने सर्वस्व-त्याग की प्रतिज्ञा ले ईश्वर में अपना चित्त लगाया है। राज्य के प्रति मेरे मन में कोई आकांक्षा नहीं है। चंद्रवर्मा, आपने सत्य और न्याय के लिए संघर्ष किया है और आप सबके प्रेम और आदर के पात्र हैं। मेरा विचार है न केवल वीरपुर के, बल्कि माहिष्मती के नागरिक भी राजा के रूप में आपका अभिनन्दन करेंगे। आपका राजा होना सभी को प्रसन्नता प्रदान करेगा।''

समस्त प्रजाओं ने तपोवर्द्धन की बात का एक स्वर में अनुमोदन किया। तपोवर्द्धन ने स्वयं चंद्रवर्मा का राज्य-तिलक किया। प्रजाओं ने चंद्रवर्मा और तपोवर्द्धन का जय-जयकार किया।

चंद्रवर्मा ने राजपद ग्रहण करते ही अपने परम विश्वसनीय साथी धीरमल्ल एवं सुबाहु को प्रधानमंत्री तथा प्रधान सेनापति पद पर नियुक्त किया और अनेक वर्षों तक प्रजा के हितकार्यों को करते हुए शासन किया।

(समाप्त)

दो बहनें

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये। पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाला और सदा की भाँति श्मशान की तरफ़ चलने लगे। तब शव में वास करने वाले बेताल ने पूछा, "राजन, इस अर्द्धरात्रि के समय आप जो श्रम उठा रहे हैं, उसे देखने पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि आप किसी की निस्वार्थ सेवा करने के ख्याल से ऐसा कर रहे हैं। पर कई संदर्भों में इस बात का निर्णय करना कठिन हो जाता है कि क्या स्वार्थ है और क्या निस्वार्थ है। महान ज्ञानी के रूप में लोकप्रियता प्राप्त सुमतिशील नाम के एक योगी ने एक बार इस विषय में भूल की थी और एक निर्दोष व्यक्ति को दुख पहुँचाया था। मैं वह कहानी आपको सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये !"

बेताल कहानी सुनाने लगा:

बहुत पहले की बात है, कर वीरपुर में धर्मवीर नाम का एक सामन्त राजा राज्य करता

बेताल कथा

था। उसके दो पुत्रियां थीं—नर्मदा और नीरदा। दोनों बहनें सुन्दर और कलाविज्ञ थीं, फिर भी नीरदा में कुछ विशेषताएं थीं। वह न केवल अपनी बड़ी बहन नर्मदा से अधिक सुन्दर थी, बल्कि चारित्रिक दृष्टि से भी अधिक भावुक, अधिक महत्वाकांक्षिणी थी। धन, अलंकरण एवं अधिकार को लेकर भी नीरदा के अन्दर अधिक आकर्षण था।

एक दिन पद्मकेतु नाम का एक गन्धर्व आकाशमार्ग से जा रहा था। उसने देखा, भूलोक के एक सुन्दर उपवन में एक तरुणी अकेली टहल रही है। वह नर्मदा थी। गन्धर्व उसके सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होकर नीचे उतरा और उसके पास जाकर उसने मधुर-मन्द स्वर में पुकारा, "सुन्दरी!"

यह सम्बोधन सुनकर नर्मदा ने मुड़कर पद्मकेतु की ओर देखा। सुन्दर गन्धर्व को सामने देख वह आश्चर्य चकित हो गयी।

नर्मदा की विस्मय विमूढ़ दृष्टि को देखकर गन्धर्व ने उसे अपना परिचय देते हुए कहा, "मैं पद्मकेतु नाम का गन्धर्व हूँ। मैं आकाशमार्ग से जा रहा था, तुम्हें देखा तो तुम्हारे अद्भुत सौन्दर्य से आकर्षित होकर मैं तुम्हारे सामने प्रार्थी होकर उपस्थित हुआ हूँ। मैं तुम्हारे साथ विवाह करना चाहता हूँ और तुम्हारी स्वीकृति चाहता हूँ।"

गन्धर्व की बातें सुनकर नर्मदा को और भी अधिक आश्चर्य हुआ। वह क्षण भर मौन रहकर बोली, "आपने इतने आकस्मिक रूप से मेरे सामने यह प्रस्ताव रखा है कि मैं तत्काल कोई उत्तर नहीं दे सकती। कल संध्या-समय मैं आपको इसका उत्तर दूँगी।"

पद्मकेतु ने नर्मदा की बात मान ली और दूसरे ही क्षण वहाँ से ओझल हो गया।

नर्मदा अपने शयन-कक्ष में आयी और आधीरात तक गन्धर्व के प्रस्ताव के बारे में सोचती रही। अंत में वह किसी निर्णय पर पहुँची और निश्चिंत होकर सोगयी।

दूसरे दिन संध्याकाल नियत समय नर्मदा उपवन में पहुँची, पद्मकेतु उसके समीप आया।

नर्मदा ने पद्मकेतु से विनीत स्वर में कहा, "मैंने आपके प्रस्ताव पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। पास के उस लता कुंज के पीछे

चंद्रशिला पर मेरी छोटी बहन नीरदा बैठी हुई है। आप उसे देखकर मेरे पास लौट आइये !"

पद्मकेतु ने नर्मदा की बात मान ली। वह मालती लताकुंज के पीछे गया। वहाँ चंद्रशिला पर एक अद्भुत सुन्दर तरुणी बैठी हुई फूल माला गूंथ रही थी। नीरदा को देखकर पद्मकेतु मोहित होगया। वह नर्मदा को और अपने विवाह के प्रस्ताव को तक्षण भूल गया। उसने नीरदा के समीप जाकर अत्यन्त मधुर स्वर में कहा, "सुन्दरी !"

नीरदा ने यह आवाज़ सुनी तो सिर उठाकर गन्धर्व की ओर देखा। वह आश्चर्य और संभ्रम के कारण उठकर खड़ी होगयी।

पद्मकेतु मन्द-मन्द मुस्कराते हुए बोला, "सुन्दरी ! मैं पद्मकेतु नाम का गन्धर्व हूँ। सौन्दर्य में तुम्हारी समता कर सकें, ऐसी ललनाएँ गन्धर्व लोक में नहीं हैं। मैं तुम्हारे साथ विवाह करना चाहता हूँ। मुझे अपनी स्वीकृति दो !"

गन्धर्व की मोहक बातों पर नीरदा को अपार हर्ष हुआ। उसने तुरन्त अपनी स्वीकृति दे दी।

पद्मकेतु ने प्रसन्न होकर उसी क्षण उसी स्थल पर गन्धर्वविधि से विवाह करने का प्रस्ताव रखा। नीरदा ने आपत्ति प्रकट करते हुए कहा, "गन्धर्वविधि से विवाह करने पर हमारा विवाह गुप्त रह जायेगा। मैं चाहती हूँ कि मेरा विवाह बड़ी धूमधाम और बड़े वैभव के साथ संपन्न हो। हम अपने निर्णय को पिता महाराज धर्मवीर को बता देते हैं। भव्य रूप से शोभायमान विवाह-मंडप में हमारा विवाह होगा।"

पद्मकेतु ने नीरदा की इच्छा को तुरन्त स्वीकार कर लिया और शीघ्र मिलने का वचन देकर चला गया। नीरदा राजभवन के अन्दर गयी और सारा वृत्तान्त हर्ष-गद् गद् होकर नर्मदा को सुना दिया।

नर्मदा गंभीर स्वर में बोली, "बहन, मैं सारा वृत्तान्त जानती हूँ। इस मामले में मैं तुम्हें एक सलाह देना चाहती हूँ।"

नीरदा ने पूछा, "क्या है वह सलाह ?"

"इसी पद्मकेतु ने पहले मुझे देख कर मेरे साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की थी। उसके प्रति मेरे मन में विश्वास नहीं था।

इसीलिए मैंने उसकी परीक्षा लेनी चाही और उसे तुम्हारे पास भेजा । वह तुम्हें देखकर मुझे भूल गया और तुम्हारे साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की । इससे यह स्पष्ट विदित होता है कि वह कितना चंचल-चित्त है । ऐसे व्यक्ति से विवाह करके तुम सुखी नहीं रह सकोगी । तुम्हारा जीवन बरबाद हो जायेगा ।'' नर्मदा ने समझाया ।

अपनी बड़ी बहन की बातें सुनकर नीरदा खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली, ''एक गन्धर्व स्वयं विवाह का प्रस्ताव रख रहा है तो मैं उसका तिरस्कार करूँ ? इसी को कहते हैं 'संपत्ति के मार्ग में रोड़ा अटकना' । मेरी बहन, ललाट के लेख को कोई नहीं मिटा सकता । अनावश्यक आशंका के वशीभूत होकर मैं आये हुए सौभाग्य को ठुकरा नहीं सकती ।''

महाराज धर्मवीर ने भी इस विवाह को स्वीकृति दी । उन्होंने एक माह के अन्दर नर्मदा का विवाह एक सामन्त राजकुमार से संपन्न कर दिया और नीरदा का विवाह गन्धर्व पद्मकेतु के साथ हो गया । नर्मदा का दाम्पत्य जीवन शांतिपूर्वक व्यतीत होने लगा, पर नीरदा की गृहस्थी चार दिन की चांदनी के बाद अंधेरी रात में परिवर्तित हो गयी । एक दिन गन्धर्व नीरदा को छोड़कर गया तो फिर लौटकर नहीं आया । नीरदा दुख और अपमान के बोझ से बुरी तरह दब गयी । अपनी छोटी बहन की हालत पर नर्मदा मन ही मन व्यथित होती, पर क्या कर सकती थी !

उन्हीं दिनों कर वीरपुर में एक ज्ञानी महात्मा सुमतिशील का आगमन हुआ । महात्मा सुमतिशील अपनी अन्तर्दृष्टि और कल्याणभावना के लिए प्रसिद्ध थे । नर्मदा ने उनका नाम सुना तो अपनी छोटी बहन नीरदा को साथ लेकर वह उनके दर्शनों को गयी । महात्मा सुमतिशील ने नर्मदा के मुख से सारा वृत्तान्त सुना । फिर उसकी ओर तीक्ष्ण दृष्टि डालकर कहा, ''नर्मदा, तुमने स्वार्थबुद्धि से प्रेरित होकर अपनी बुद्धिमत्ता दिखाई है !'' नर्मदा कुछ जवाब न दे सकी ।

इसके बाद वे महात्मा नीरदा की ओर मुड़े और बोले, ''बेटी, मैं तुम्हें एक मंत्र का उपदेश

करूँगा। तुम उसका जप करते हुए शक्तिस्वरूपिणी पार्वती की उपासना करो ! तुम्हारी गृहस्थी फिर से जुड़ जायेगी और तुम्हारा दाम्पत्य जीवन भी सुमधुर हो जायेगा।" यह कहकर महात्मा सुमतिशील ने नीरदा को मंत्रोपदेश दिया।

कुछ ही दिनों में नीरदा की उपासना फलीभूत हुई। पद्मकेतु पुनः उसके पास आया और अत्यन्त प्रेमपूर्वक उसके साथ रहने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर विक्रमार्क से पूछा, "राजन, गन्धर्व पद्मकेतु ने नर्मदा के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की थी, पर उसने नर्मदा की छोटी बहन नीरदा के साथ विवाह किया, फिर भी नर्मदा दुखी नहीं हुई। ऐसे गंभीर स्वभाव वाली युवती को महात्मा सुमतिशीलने स्वार्थबुद्धि से प्रेरित कहा और उसकी निन्दा की। क्या यह अन्याय और अधर्म नहीं है ? इसका समाधान अगर आप जानकर भी न करेंगे तो आपका सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "उन दोनों बहनों में छोटी नीरदा स्वभाव से भोली है, पर उसमें अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण रखने की सामर्थ्य नहीं है। वह स्नेह की पात्री है, द्वेष की नहीं। जहाँ तक नर्मदा का प्रश्न है, वह अत्यन्त चतुर और बुद्धिमती है। वह पद्मकेतु के बारे में अपना निर्णय करने के लिए अपनी बहन को ही शिकार बना लेती है। नर्मदा को पद्मकेतु पर विश्वास नहीं था। वह अच्छी तरह जानती थी कि पद्मकेतु उसकी अधिक सुन्दर बहन नीरदा के प्रति आकर्षित हो जायेगा और उसकी महत्वाकांक्षिणी बहन इस विवाह के लिए तुरन्त तैयार हो जायेगी। वह इस बात से भी अनभिज्ञ न थी कि अगर उसका संशय ठीक निकला तो पद्मकेतु से विवाह करने पर जो कठिनाइयाँ उसे झेलनी पड़तीं, वे उसकी बहन को झेलनी पड़ेंगी। फिर भी उसने पद्मकेतु को बहन के पास भेज दिया। इसीलिए महात्मा सुमतिशील ने उसकी निन्दा की। इसमें महात्मा ने कोई अधर्मपूर्ण व्ययहार नहीं किया।"

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

विश्वास का धन

श्यामलाल जौहरी ने जब विभूतिनगर में अपना सर्राफ़ि का काम शुरू किया तो उसे दूकान में अपनी मदद के लिए एक सहायक की आवश्यकता हुई। उसने योग्य व्यक्ति की तलाश शुरू की। कुछ ही दूर पर शरभराज सुनार की दूकान थी। उसके यहाँ महेंद्र नाम का एक युवक काम करता था। जब महेंद्र को यह ख़बर लगी कि श्यामलाल जौहरी को एक सेवक की ज़रूरत है तो उसने श्यामलाल के पास आकर इस नौकरी की इच्छा प्रकट की।

श्यामलाल ने पूछा, "तुम इस समय कहाँ काम करते हो ?"

महेंद्र ने जवाब दिया, "बाबूजी, मैं आजकल शरभराज सुनार की दूकान में काम कर रहा हूँ। पर अगर मुझे आप दस रुपये अधिक वेतन दें तो मैं आपके यहाँ काम पर लग सकता हूँ !"

श्यामलाल कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, "देखो महेंद्र, मैं तुम्हें अपनी दूकान में नौकरी दे सकता हूँ। लेकिन, यह बात तुम्हें सच-सच बतानी होगी कि तुम शरभराज की नौकरी क्यों छोड़ना चाहते हो ? मैं इस बात पर विश्वास नहीं कर सकता कि तुम सिर्फ़ दस रुपये अधिक वेतन पाने के लिए वहाँ की नौकरी छोड़ना चाहते हो !"

"बाबूजी, इसमें झूठ बोलने या छुपाने की कोई बात नहीं है। मुझे वहाँ बहुत कष्ट है। दिन-रात मेहनत करने पर भी वे मुझे तंग करते हैं। शरभराज के यहाँ काम करना तलवार की धार पर चलना है। 'हाँ' कहना भी गुनाह, 'ना' कहना भी गुनाह। मेरी नौकरी तो ऐसी है, जिसमें छींकने-खाँसने की भी मुमानियत है।" महेंद्र ने दयनीय आवाज़ में कहा।

श्यामलाल ने महेंद्र से कहा, "मैं तुम्हें अपना निर्णय दो-चार दिन बाद बता दूँगा।"

रामनाथ शर्मा

थोड़ी देर बाद श्यामलाल शरभराज की दूकान पर पहुँचा और उससे एकान्त में धीरे से पूछा, "भाई शरभ, तुम्हारी दूकान में जो महेंद्र नाम का एक युवक काम करता है, तुम उसके आचरण के बारे में मुझे पूरी जानकारी दे सको तो अच्छा है। मेरे गाँव का एक आदमी उसके साथ अपनी लड़की का विवाह करना चाहता है।"

शरभराज ने बड़े उत्साह से उत्तर दिया, "महेंद्र अत्यन्त समर्थ एवं ईमानदार है। वह एक अरसे से मेरे धंधे में हाथ बँटा रहा है। उससे मुझे आज तक कोई शिकायत नहीं हुई। आप यह बात मेरी तरफ़ से कन्या पक्ष के लोगों को बता सकते हैं।"

शरभराज सुनार का उत्तर सुनकर श्यामलाल हँस पड़ा और बोला, "महेंद्र के बारे में तुम तो इतनी अच्छी धारणा रखते हो, लेकिन वह कहता है कि आपके साथ काम करना पूरा सर दर्द है और तलवार की धार पर चलने के समान कठिन है। वह मेरी दूकान में मात्र दस रुपये अधिक देने पर काम करने को तैयार है। वह स्वयं मेरे पास आया था।"

"आपने तो अभी कहा कि आपके गाँव का कोई आदमी महेंद्र को अपनी लड़की देना चाहता है। क्या यह बात कोरी कल्पना थी?" शरभराज का स्वर उत्तेजना से भरा हुआ था।

"महेंद्र के बारे में सच्ची जानकारी लेने के लिए मैंने यह बात गढ़ी थी। पर इतना तो स्पष्ट ही है कि वह तुम्हारे प्रति अच्छे विचार नहीं रखता।" श्यामलाल ने कहा।

यह उत्तर सुनकर शरभराज का चेहरा तमतमा उठा और वह श्यामलाल की ओर तीक्ष्ण दृष्टि डालकर बोला, "आप महेंद्र के बारे में मेरी राय जानना चाहते थे। जो बात थी, मैंने स्पष्ट बतला दी। मेरे बारे में महेंद्र की क्या राय है, यह बात मैंने आपसे नहीं पूछी, फिर भी आपने बतला दी। ख़ैर, वह मेरे बारे में चाहे जैसी भी धारणा क्यों न रखे, मैं उसके प्रति अपनी राय में कोई परिवर्तन नहीं कर सकता।"

"तुम्हारा व्यवहार मुझे बड़ा विचित्र लग रहा है, शरभ भाई !" श्यामलाल ने कहा ।

"इसमें विचित्र लगने की कोई बात नहीं है। अगर आपको नौकर की आवश्यकता है तो आप महेंद्र को दस के बदले बीस रुपये अधिक देकर रख सकते हैं। वह बड़ा बुद्धिमान है, साथ ही अत्यन्त विश्वासपात्र भी। उसके बारे में मेरी यही राय है।" शरभराज ने दृढ़ स्वर में कहा ।

श्यामलाल जौहरी चुपचाप वहाँ से चला गया ।

महेंद्र दूकान के दरवाज़े की ओट में छिपकर इन दोनों का वार्तालाप सुन रहा था। श्यामलाल के जाते ही वह दूकान के अन्दर आया और शरभराज के पैरों पर गिर कर बोला, "बाबूजी, आज मैंने इतना समझ लिया है कि एक व्यक्ति का विश्वास और प्रेम प्राप्त करने से बढ़कर कोई अर्जन नहीं है। विश्वास का धन सबसे बड़ा धन है। मैं अपनी आवश्यकता और परिस्थितियों के कारण आपके बारे में झूठ बोलकर कुछ अधिक वेतन पाने की इच्छा से श्यामलाल बाबू के पास गया था। मैं ने आप पर झूठ-मूठ के आरोप लगाये, पर आपने मुझे आज बहुत ऊँचा सबक़ सिखाया ।"

इस घटना के बाद बहुत वर्षों तक महेंद्र शरभराज के यहाँ पूरी ईमानदारी से काम करता रहा। उसने व्यापार का अनुभव प्राप्त किया। फिर एक दिन शरभराज का प्रोत्साहन पाकर उसने अपना निजी व्यापार शुरू कर दिया और चन्द वर्षों के अन्दर एक धनीमानी व्यक्ति बन गया ।

हमारे मन्दिर

तिरुपति

नारदमुनि एकबार महाविष्णु के दर्शन करने गये तो उन्होंने वार्तालाप के संदर्भ में शेषाचल के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन किया। यह स्थान भारतवर्ष की पूर्वीघाटियों में फैली सप्तपर्वत-श्रेणियों से युक्त है।

कुछ समय बाद महाविष्णु अपने परिसर में परिवर्तन पाने की इच्छा से शेषाचल पर अवतीर्ण हुए। वहाँ के अद्भुत नैसर्गिक सौन्दर्य को देखकर वे अत्यन्त आनन्दित हुए। वे एक शिलातल पर बैठे और ध्यानमग्न होगये।
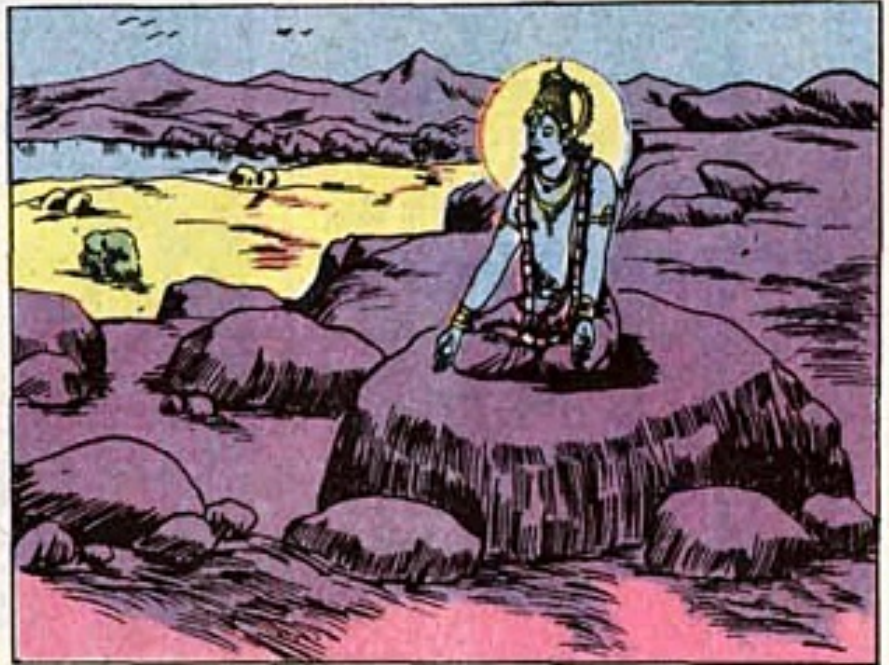
इसके कुछ समय बाद महाविष्णु उस स्थान से चले गये, लेकिन उस शिला में उनका विग्रह प्रत्यक्ष रह गया। उस प्रतिमा के अन्दर विष्णु का दिव्य अंश शाश्वत रूप से विद्यमान है। कालक्रम में उस शिला-प्रतिमा के चारों ओर पेड़-पौधे उग आये, दीमकों ने अपनी बाँबी बना ली।
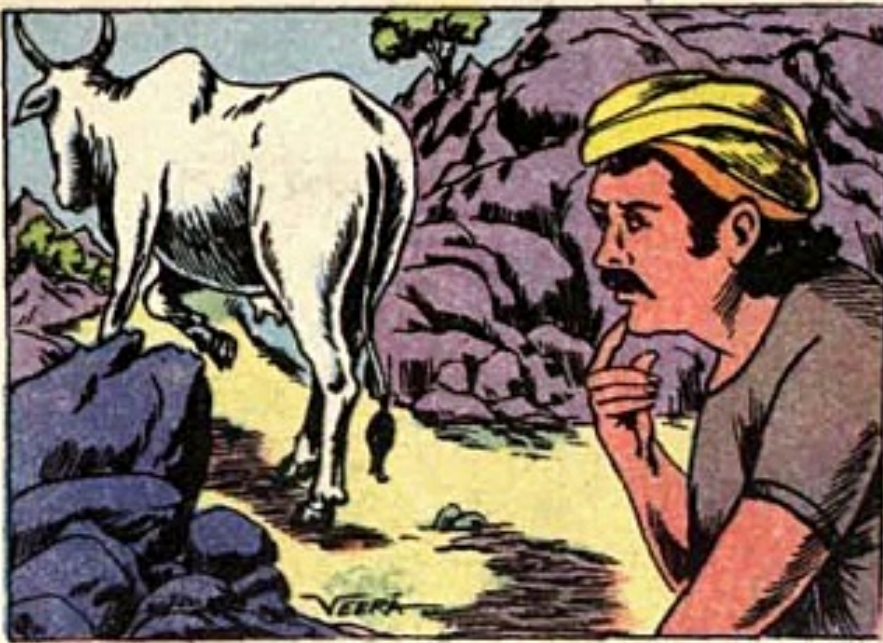
तब एक घटना घटित हुई। उस प्रदेश में एक चरवाहा अपनी गायों को चराया करता था। उसने देखा कि उसकी गायों के झुंड में से एक गाय नियमित रूप से कुछ देर के लिए कहीं चली जाती है। वह गाय घर पर पूरा दूध भी नहीं देती थी। चरवाहे ने एक दिन उस गाय का अनुसरण किया।

वह गाय पहाड़ पर चढ़ गयी और एक झाड़ी के पास खड़ी होगयी। तत्काल उसके थनों से दूध बहने लगा और बांबी के भीतर छिपे विग्रह पर गिरने लगा। यह दृश्य देखकर चरवाहा आश्चर्य चकित होगया। उस विग्रह के समीप जाने की उसकी हिम्मत न हुई। वह तुरन्त पहाड़ पर से नीचे उतर आया।
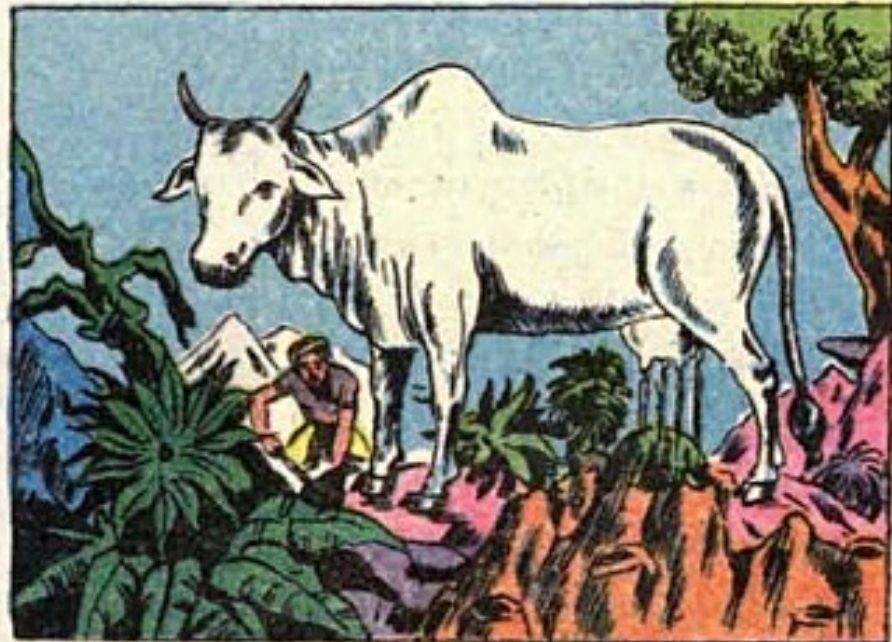
चरवाहे के मुँह से वह घटना राजा के कानों में पहुँची। उसने पहाड़ पर जाकर बांबी के भीतर विद्यमान विष्णु की प्रतिमा को ऊपर निकलवाया और एक अन्य पहाड़ी शिखर पर उस मूर्ति को प्रतिष्ठित किया। उसके लिए एक मन्दिर का निर्माण कराया गया और एक महान शिल्पी ने उस मूर्ति को अत्यन्त कलापूर्ण रूप प्रदान किया।

सप्ताचल के वेंकटेश्वर के रूप में विख्यात महाविष्णु से विवाह करने के लिए लक्ष्मी ने आकाश राजा के यहाँ जन्म लिया। अद्भुत रूप-लावण्य की राशि इस कन्या को पद्मावती नाम मिला।

वेंकटेश्वर एक दिन मानव रूप में वन-विहार कर रहे थे कि पद्मावती से उनका साक्षात्कार हुआ। उस दिव्य युगल ने एक दूसरे को पहचान लिया और पृथ्वी लोक में भी अपना विवाह संपन्न किया। तिरुमल पर्वत के चरणतल में निर्मित मन्दिर में देवी पद्मावती भक्तों की पूजा-अर्चना प्राप्त करती हैं।

हमारे देश के प्रसिद्ध मन्दिरों में तिरुपति का विशिष्ट स्थान है। अनेक राजाओं ने मन्दिर के पुनर्निर्माण तथा मन्दिर के प्रांगण का विस्तार करने में योगदान किया है। मन्दिर के गोपुर का विमान स्वर्ण से आच्छादित है।
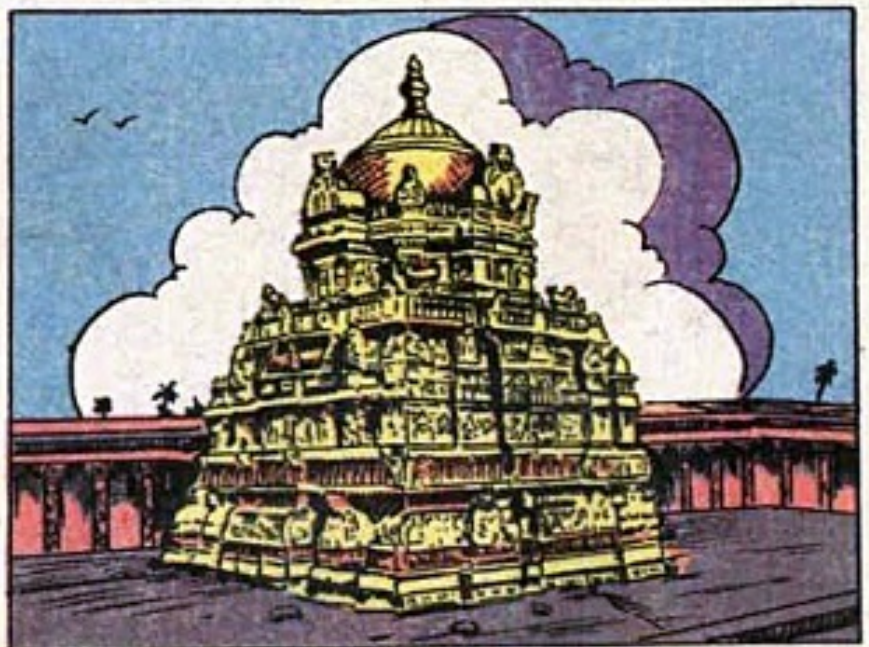
देश के कोने-कोने से भक्त जन दल बांधकर यहाँ आते हैं और हुंडी में अपनी भेंट चढ़ाते हैं। भक्तों से प्राप्त धन से अनेक शिक्षा-संस्थान, स्वास्थ्य केंद्र चलाये जाते हैं और असंख्य धार्मिक कार्य संपन्न किये जाते हैं ।

पुराणों में ऐसा वर्णन है कि सीता, राम एवं लक्ष्मण ने इस दिव्य स्थल में कुछ समय निवास किया था । उस स्थल को स्वामी तीर्थ कहा जाता है । विष्णु अपने लोक से पृथ्वी के जिस सुन्दर शिखर पर उतरे थे, वहाँ विष्णु के चरण-कमल से अंकित एक सुन्दर शिलाफलक है ।
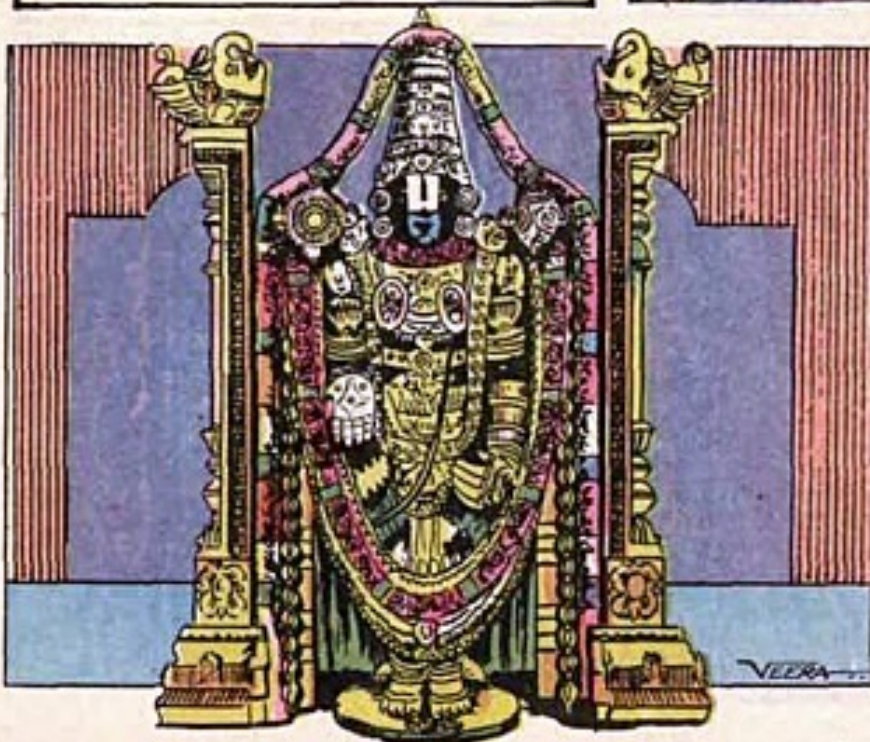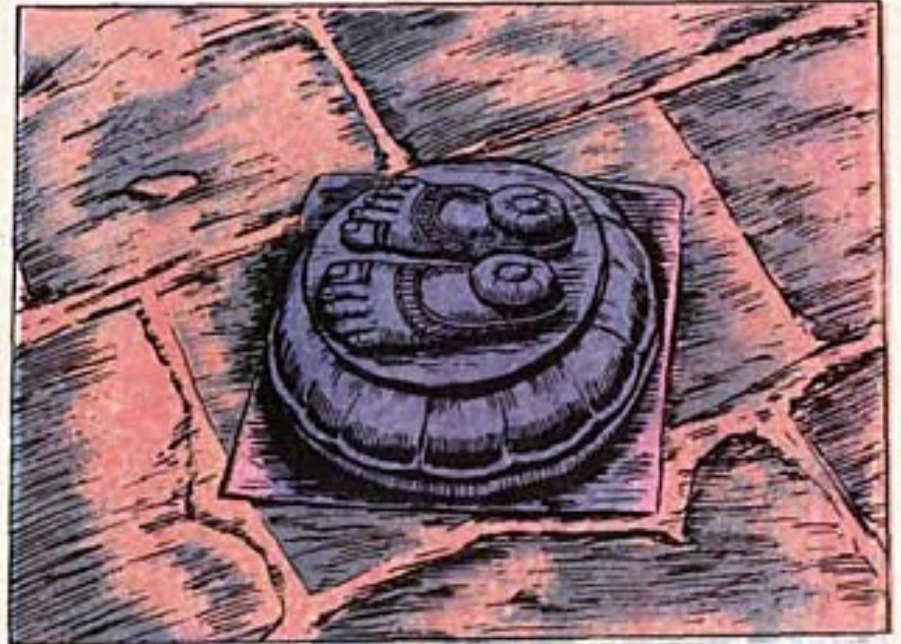
तिरुपति मन्दिर में स्थापित भगवान वेंकटेश्वर की यह मूर्ति दिव्य प्रेम को अभिव्यक्त कर रही मन्दस्मित से शोभायमान है। संपूर्ण मूर्ति मणि-माणिक तथा अमूल्य आभूषणों से अलंकृत है । भक्तजन सप्ताचल के वेंकटेश्वर के दर्शन करना मुक्ति एवं मुक्तिदायक मानते हैं ।

भाग्य देवी

अफ्रीका के एक गाँव में एक मछुआरा रहता था । वह पास के विशाल सरोवर से मछलियाँ पकड़कर अपना गुज़ारा करता था । उसके पास मछलियों को फँसाने के लिए बड़ी-बड़ी गोल, ऊँची, बर्तनों जैसी टोकरियां थीं । वह अपनी डोंगी में टोकरियों को ले जाता और सरोवर में जहाँ कम गहरा पानी होता, टोकरियों को रस्सी से बाँधकर पानी में उतार देता । रस्सियों के छोर पर वह लकड़ी के टुकड़े बांध देता, जो पानी पर तैरते रहते । पानी के अन्दर टोकरियों के इधर-उधर होने पर ये टुकड़े भी इधर-उधर हो जाते थे । इससे मछुआरे को टोकरियों का सही स्थान जानने में आसानी होती । शाम के समय वह उन टोकरियों को ऊपर खींच लेता और फँस गयी मछलियों को बाज़ार में बेचकर अपने रोटी-पानी का इन्तज़ाम करता ।

एक दिन मछुआरा अपनी टोकरियों को एक-एक कर ऊपर खींच रहा था । दो टोकरियों में उसे एक भी मछली न मिली । तीसरी टोकरी में एक छोटा-सा केकड़ा फँसा हुआ था । पर चौथी टोकरी काफ़ी भारी सी लगी । मछुआरा खुशी से फूला न समाया । वह सोचने लगा, ज़रूर कोई ऐसी मछली फँसी है, जिसकी खूब क़ीमत मिलेगी । अब तो निश्चय ही उसे गरीबी से छुटकारा मिल जायेगा । उसने टोकरी को डोंगी पर खींच लिया । पर यह क्या, उसके अन्दर तो कंकाल मात्र एक बूढ़ी बैठी थी ।

मछुआरे का आश्चर्य अगले ही क्षण खीज में परिवर्तित हो गया । वह उस बूढ़ी को फिर से तालाब में ढकेल देना चाहता था, पर वह बड़े अनुनयभरे स्वर में मछुआरे से बोली, "बेटा, तुम मुझे फिर से पानी में मत ढकेलो । तुम मुझे अपने साथ घर ले चलो ! मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ, मेरे द्वारा तुम्हारा कोई नुक़सान न होगा । हित ही होगा ।"

अफ्रीका की लोक कथा

मछुआरे को विश्वास तो नहीं हुआ। फिर भी उसने दूसरे दिन बड़ी मेहनत करके बाँसों की एक बाड़ बनायी और उसे चारों तरफ बाँधकर एक पशुशाला तैयार कर ली। यह सब करते हुए उसे शाम होगयी।

इसी समय उसे गायों के रंभाने की आवाज़ सुनाई दी। शीघ्र ही एक बैल के साथ कई गायें व बछड़े-बछिया एक झुंड के रूप में आये और पशुशाला में प्रवेश करके इस तरह एक-एक स्थान पर पसर गये, मानो वे हमेशा ही यहाँ आकर विश्राम करते हों।

उस दिन से मछुआरे के जीवन में भारी परिवर्तन आ गया। धीरे-धीरे उसकी दौलत बढ़ती गयी और वह उस प्रदेश के धनवानों में गिना जाने लगा। उसने ज़मीन-ज़ायदाद भी खड़ी कर ली और विवाह करके सुखपूर्वक रहने लगा। वह अब एक प्रतिष्ठित खेतिहर, पशुपालक और सद्गृहस्थ था। लेकिन, वह दिन पर दिन घमण्डी होता गया। अगर कोई उससे सलाह लेने आता तो वह अकड़ कर कहता, "क्या मेरा यही धंधा है? कल आना, पर याद रखो, ख़ाली हाथ न आना!"

इसी तरह काफ़ी समय बीत गया। एक दिन मछुआरा पड़ोसी गाँव में दावत खाने गया। वहाँ उसने डटकर खाना खाया और ऊपर से खूब शराब पी ली। दावत के समाप्त होते-होते काफ़ी रात बीत गयी। मछुआरा लोट-पोट होता घर पहुँचा। वह इतना बदहवास था कि किसी पर भी टूट पड़ सकता था। उसने देखा किवाड़

"मैं तुम्हें अपने साथ ले जाऊँ? मैं खुद दाने-दाने को तरस रहा हूँ, और उलटे तुम्हें भी खाना खिलाऊँ?" मछुआरे ने गुस्से में भरकर कहा।

पर बूढ़ी गिड़गिड़ाकर उसके पीछे चल पड़ी। मछुआरे ने बड़े बेमन से अपनी दो सूखी रोटी निकालीं और थोड़ा सा हिस्सा उस बूढ़ी को भी दिया। खाना खा लेने के बाद मछुआरे ने बूढ़ी से पूछा, "बूढ़ी माँ, तूने कहा था कि मेरा हित होगा। बता तो, वह कौन-सी बात है?"

"कल शाम तक तुम पशुओं के एक झुंड के मालिक बन जाओगे। इसलिए तुम एक पशुशाला अभी से बना लो।" बूढ़ी ने निश्चय भरे स्वर में कहा।

बन्द हैं और सब लोग सो चुके हैं ।

वह अटपटी आवाज़ में चीखा, "किवाड़ खोलो ! किवाड़ खोलो ! घर का मालिक आया है ।" वह ज़ोर-ज़ोर से दरवाज़ा खटखटाने लगा, पर किसी ने भी उठकर किवाड़ नहीं खोले । यह देख मछुआरा आपे से बाहर हो गया । "अरे, क्या मैं इन लोगों के लिए इतना गया-बीता हूँ, मेरी कोई क़ीमत नहीं ? तालाब से मैंने उस बूढ़ी को बाहर निकाला । वह डायन क्या कर रही है ? क्या वह भी जवानों की नींद सोगयी ?" इसके बाद वह बड़ी ज़ोर से चीखा, "अरी ओ शैतान की माँ, अरी ओ बुढ़िया, उठ कर दरवाज़ा तो खोल...।"

मछुआरा अभी चीख-चिल्ला ही रहा था कि बूढ़ी दरवाज़ा खोलकर उसके सामने खड़ी हो गयी । उसने उसे घूर कर देखा और कड़क कर बोली, "अरे, तू मेरे उपकार को भूल गया ? तूने मेरी निन्दा की, मुझे गालियां सुनायीं ? जो उपकार को याद नहीं रखते और शिष्टता का व्यवहार करना नहीं जानते, उनके पास मैं नहीं रहना चाहती । कल ही मैं अपने स्थान को लौट जाऊँगी ।"

"अरी बुढ़िया, क्या तू मुझे धमकी दे रही है ? खुशी से चली जा ! तुझे यहाँ रोकने वाला है ही कौन ? मेरा भी पिंड छूट जायेगा ।" मछुआरा दहाड़ कर बोला ।

दूसरे दिन सुबह उठकर बूढ़ी ने अपना बिस्तर समेटा । जूठे बरतन माँजे । घर की सफ़ाई की और उस घर से एक कण भी लिये बगैर बाहर निकली । उसने पशुशाला में आकर उसकी बाड़ खोल दी । इसके बाद वह उसी तालाब की ओर चल पड़ी, जहाँ से वह मछुआरे की टोकरी में आयी थी । सारे पशु बूढ़ी के पीछे चल पड़े और उसके साथ तालाब में उतर कर अदृश्य हो गये ।

मछुआरा बहुत जल्दी ही फिर अपनी पहले की स्थिति में पहुँच गया और मछलियां पकड़कर पेट पालने लगा । उसकी भाग्य देवी उसके अपने ही अनाचरण और मूर्खता के कारण उसको त्याग कर चली गयी ।

प्रतिभा

एक बार ज्ञानानन्द और विजयानन्द की मुलाक़ात मार्ग मध्य में हुई। ज्ञानानन्द उत्तर भारत की यात्रा करके लौट रहा था और विजयानन्द दक्षिण भारत की यात्रा से लौट रहा था। दोनों एक स्थान पर बैठकर अपने यात्रा-अनुभवों की चर्चा करने लगे। बातचीत के दौरान ज्ञानानन्द ने कहा, "प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर कोई न कोई प्रतिभा अवश्य होती है।"

"मैं इस बात में विश्वास नहीं करता कि हर व्यक्ति प्रतिभावन होता है।" विजयानन्द ने आपत्ति की।

इस सवाल को लेकर उन दोनों के बीच थोड़ी देर तक वाद-विवाद होता रहा। अन्त में विजयानन्द ने कहा, "उदाहरण के रूप में आप ही को लें। आप बताइये, आपके अन्दर कौन सी प्रतिभा है?"

"मेरे अन्दर सामनेवाले व्यक्ति की प्रतिभा को समझने की प्रतिभा है।" ज्ञानानन्द ने उत्तर दिया।

"तब तो आप जानते ही होंगे कि मेरे अन्दर कौन-सी प्रतिभा है? कृपाकर बताइये!" विजयानन्द ने उत्तेजित होकर पूछा।

"आपके अन्दर सामने वाले व्यक्ति की प्रतिभा को न समझने की प्रतिभा है।" ज्ञानानन्द ने तपाक से उत्तर दिया।

ज्ञानानन्द का जवाब सुनकर विजयानन्द ने लज्जित होकर अपना सिर झुका लिया।

शिवलीलाएँ

महर्षि मृकंड का जन्म भृगुवंश में हुआ था। उनकी पत्नी का नाम मरुद्वती था। अनेक वर्षों तक इस दम्पती के कोई संतान नहीं हुई तो उन दोनों ने बड़ी तपस्या की और अनेक तीर्थों की यात्रा की। अन्त में ये केदारक्षेत्र में पहुँचे।

एक दिन मृकंड और मरुद्वती केदारेश्वर के ध्यान में लीन थे तो उन्हें यह वाणी सुनाई दी, "तुम दोनों की तपस्या पूर्ण हुई। अब तुम अपने आश्रम लौट जाओ। तुम्हें पुत्रलाभ होगा!"

कुछ समय बाद मरुद्वती ने एक पुत्र को जन्म दिया। सुन्दर, स्वस्थ शिशु को पाकर माता-पिता फूले न समाये। तभी उन्हें आकाश से यह भविष्यवाणी सुनाई दी, "तुम्हारा यह शिशु अल्पायु है। यह केवल बारह वर्ष तक जीवित रहेगा।" इस शोक-सूचना से माता-पिता का हृदय हाहाकार कर उठा। अन्त में यह सोचकर उन्होंने अपने हृदय को सांत्वना दी कि "यह तो सब शिव की लीला है। हम साधारण प्राणी इसके अधीन हैं, हम कर ही क्या सकते हैं!"

मुनि मृकंड ने अपने पुत्र का जातकर्म संस्कार कर उसका नामकरण संस्कार सम्पन्न किया। वह शिशु मार्कण्डेय कहलाया। बालक धीरे-धीरे बड़ा होने लगा। ठीक समय में उसका उपनयन-संस्कार हुआ। मार्कण्डेय ने गुरुकुल में जाकर आचार्यों के निकट शिक्षा प्राप्त की और ग्यारह वर्ष की आयु में अपने माता-पिता के पास लौट आया। ब्राह्मतेज से प्रदीप्त अत्यन्त तेजस्वी अपने पुत्र का मुखमंडल देखकर माता-पिता का हृदय दहल उठा। अब पुत्र की

१ मार्कण्डेय की कथा

पास लौट आऊँगा !" यह कह कर मार्कण्डेय ने अपने माता-पिता को प्रणाम किया ।

मरुद्वती तथा मृकंड ने अपने पुत्र को हृदय से लगाया और 'चिरंजीव ।' कहकर उसे आशीर्वाद दिया । तभी वहाँ देवर्षि नारद का आगमन हुआ । मृकण्ड मुनि ने नारद की अभ्यर्थना कर उनका सत्कार किया और अपने पुत्र मार्कण्डेय के बारे में सारा वृत्तान्त कह सुनाया । नारद ने मार्कण्डेय के दृढ़ संकल्प की प्रशंसा की और उसे आशीर्वाद देकर कहा, "वत्स मार्कण्डेय, तुम सीधे गौतमी तट पर जाकर वहाँ पंचाक्षरी मंत्र का जाप करो । शिव की आराधना अवश्य फलीभूत होगी और तुम्हें मृत्यु पर विजय प्राप्त होगी !"
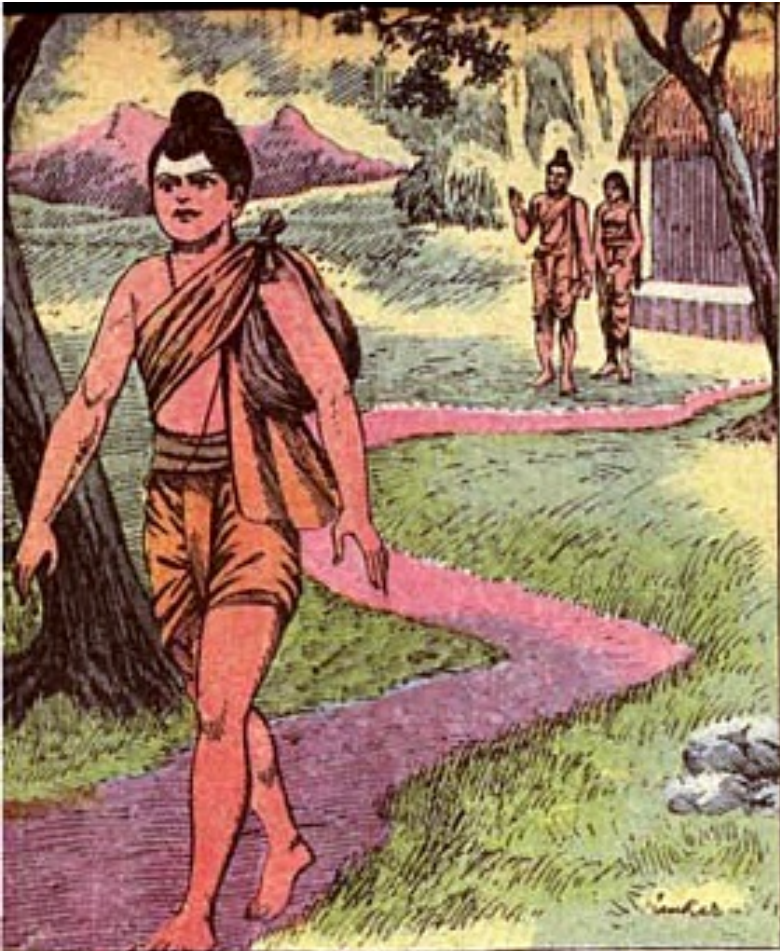
आयु शेष होने में केवल एक वर्ष बाकी था ।

मरुद्वती अपने पुत्र को बाँहों में बाँधकर आँसू बहा रही थी । मार्कण्डेय ने अपनी माँ से रोने का कारण पूछा । पर मरुद्वती मौन साधे अश्रुपात कर रही थी । मार्कण्डेय ने पिता से पूछा तो उन्होंने दीर्घ निःश्वास लेकर भरे हृदय से पुत्र को बता दिया कि उसकी जीवन-अवधि पूर्ण होने में केवल एक वर्ष शेष है ।

माता-पिता के दुख का कारण जानकर मार्कण्डेय अपने कर्त्तव्य के बारे में थोड़ी देर सोचता रहा, फिर बोला, "माँ, तात, आप चिन्ता न करें । मुझे आशीर्वाद दें ! मैं तपस्या करके परमशिव का अनुग्रह प्राप्त करूँगा और मृत्यु पर विजय प्राप्त कर चिरंजीवी होकर आपके

देवर्षि नारद का आशीर्वाद प्राप्त कर बालक मार्कण्डेय गौतमी तट पर पहुँचा । उसने सैकतलिंग की प्रतिष्ठा की और भक्तिभाव से शिव की अभ्यर्थना कर बोला, "हे चंद्रशेखर ! मेरी रक्षा करो ! मैं आपके चरणों में शरणागत हूँ, यमराज मेरा क्या कर सकते हैं ?"

उधर नारद समस्त लोकों का भ्रमण करते हुए यमलोक पहुँचे और यमराज से धीरे से बोले, "यमराज, मृत्यु से बचने के लिए मार्कण्डेय नाम का एक मुनिकुमार तपस्या कर रहा है । आपकी शक्ति की परीक्षा का समय निकट है ।"

मार्कण्डेय की आयु समाप्त होने का समय आगया । यमराज ने अपने दूतों को मार्कण्डेय
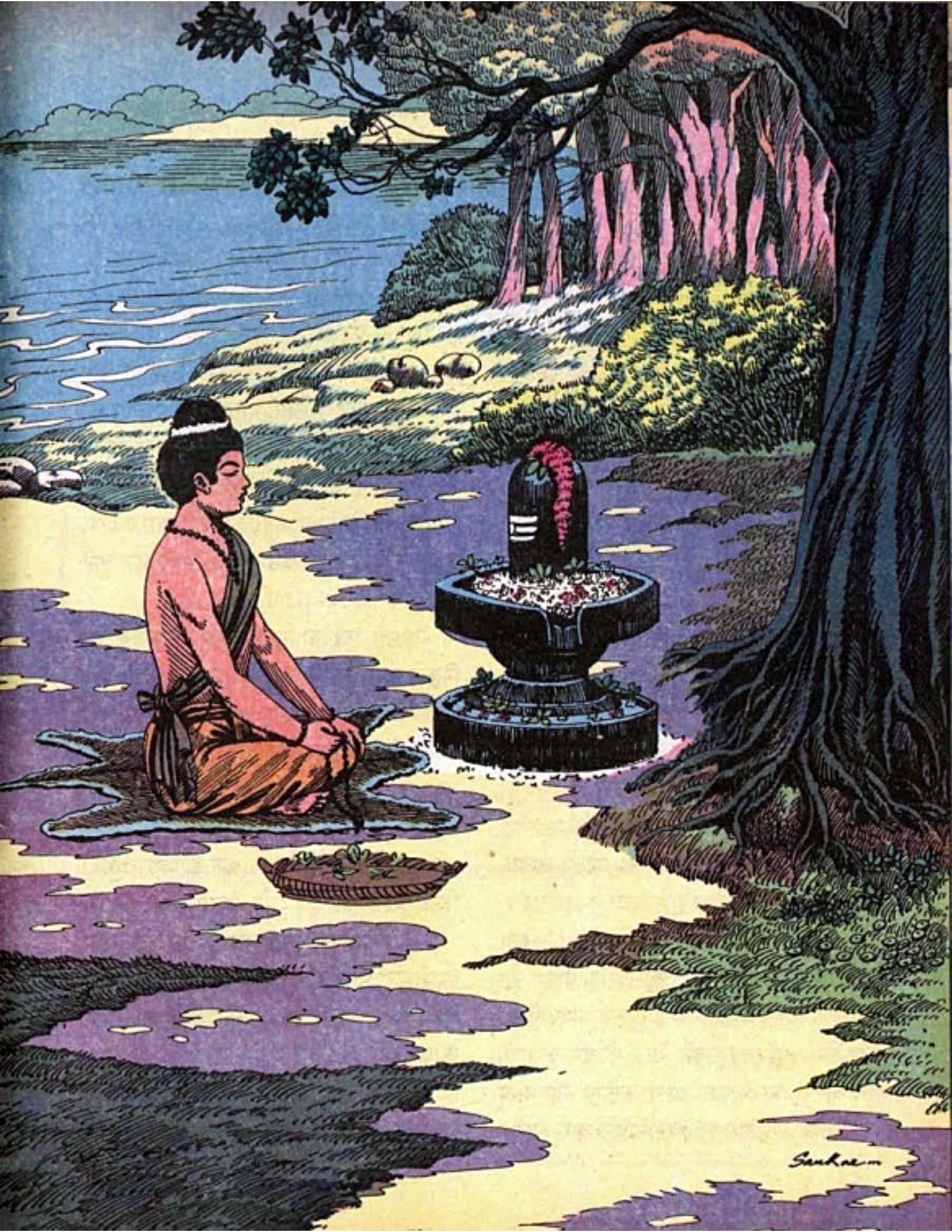
के पास भेजा कि वे उसके प्राण हरण कर लायें, पर यमदूत मार्कण्डेय के निकट नहीं जा सके और उन्हें लौट आना पड़ा। तब यमराज ने अपना दंड एवं पाश उठाया और भैंसे पर सवार होकर निकल पड़े।

मार्कण्डेय ने शिवलिंग पर सिर टेक रखा था और दोनों हाथों से शिवलिंग को पकड़कर शिवाराधना में मग्न था। यमराज ने कालपाश को मार्कण्डेय के कण्ठ की ओर फेंका। वह पाश शिवलिंग पर गिर पड़ा। शिवलिंग से शिव प्रलयरुद्र बनकर प्रकट हुए। उनके तीसरे नेत्र से अग्नि निकल रही थी। उन्होंने यमराज को अपने त्रिशूल का निशाना बनाया। यमराज भयकंपित हो, हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगे, "हर हर, मेरी रक्षा करो।" पर तुरन्त ही निष्प्राण होकर गिर पड़े।

शिव ने मार्कण्डेय के सिर पर अपना अभयहस्त रखकर वर दिया, "वत्स, मृत्यु कभी तुम्हारा स्पर्श नहीं कर सकती। कल्प-कल्पांतों तक जीवित रहकर तुम ज्ञान-भक्ति मार्ग का उपदेश करोगे।"

इसके उपरान्त देवताओं ने आकर शिव से प्रार्थना की, "हे परमेश्वर, यमराज के अभाव में अनेक संकट उत्पन्न होंगे। अतः आप यमराज को क्षमादान कर पुनः जीवित कर दीजिये!" यमराज को शिव का अनुग्रह प्राप्त हुआ और वे उठ कर इस प्रकार खड़े होगये, मानो पुनर्जन्म मिला हो।

मरुद्वती एवं मृकंड भी पुत्र की खोज में निकले थे। उन्होंने शिव-अनुग्रह प्राप्त पुत्र को देखा तो शिव के प्रति भक्तिभाव से उनकी आँखों से अश्रुप्रवाह बह चला। वे शिव-लीला का स्तोत्रगान करते हुए अपने निवास-स्थान को लौट गये।

मार्कण्डेय ने दीर्घकाल तक जीवित रहकर शिवोपासना की।

यह तो हुई मार्कण्डेय की कथा। अब राजा इंद्रद्युम्न ने अपने राज्यकाल में अपार यश प्राप्त किया था। जब जीवन पूरा होगया तो उस यश के क्षय होने तक उसने स्वर्ग-सुखों का अनुभव किया। तदुपरान्त स्वर्ग के देवताओं ने उससे कहा, "अब तुम्हारा यश क्षीण हो चुका है।

पृथ्वीलोक में कोई भी तुम्हें स्मरण नहीं करता है। स्वर्ग के नियम के अनुसार अब तुम यहाँ नहीं रह सकते। तुम पृथ्वी लोक में वापस जाओ!"

राजा इंद्रद्युम्न भूलोक में लौट आया। वह ऐसे लोगों की खोज में चल पड़ा, जो उसके नाम से परिचित हों। एक दिन वह मार्कण्डेय मुनि के पास पहुँचा और अपने बारे में प्रश्न किया।

"मैं तो आपको नहीं जानता, पर मुझसे भी अधिक आयु का प्रावारकर्ण उलूक है। चलिये, उससे चलकर पूछ लेते हैं।" मार्कण्डेय ने उत्तर दिया। तत्पश्चात् वे दोनों प्रावारकर्ण के पास पहुँचे।

प्रश्न करने पर प्रावारकर्ण ने उत्तर दिया, "मैं तो आपको नहीं जानता, लेकिन मुझसे भी बड़ी आयु का नालीकजंघ है। चलिये, उससे चलकर पूछ लेते हैं।"

नालीकजंघ भी इंद्रद्युम्न को नहीं जानता था। वह उन सबको साथ लेकर अपने से भी अधिक आयु वाले अकूपार नामक कछुए के पास पहुँचा। अकूपार ने इंद्रद्युम्न को देखकर कहा, "महाराज, मैं आपको जानता हूँ। आपने अनेक यज्ञ करके जो गायें दान में दी थीं, उन गायों के खुरों से मिट्टी उखड़ जाने के कारण यह तालाब बना, जिसमें मैं निवास करता हूँ।"

तभी देवदूत स्वर्ग से उतरे और इंद्रद्युम्न के यश को पृथ्वी पर अब भी विद्यमान जानकर उसे देवविमान में स्वर्ग ले गये।

एक अन्य कथा है। भीमावती नाम के गाँव में सोमयाजी नाम का एक शिवभक्त रहता था। उसके एक ही पुत्र था। सोमयाजी ने बड़े लाड़ से अपने पुत्र का नाम सिद्धराम रखा। सिद्धराम अभी सात वर्ष का ही हुआ था कि सोमयाजी स्वर्ग सिधार गया। पिता से वंचित उस बालक का पालन-पोषण माता बड़े लाड़-प्यार से करने लगी।

अभी दीपावली पर्व को कुछ दिन शेष थे। सिद्धराम एक दिन पत्ते एवं समिधा लाने के लिए अपने साथियों के साथ वन में गया। वहाँ एक बट-वृक्ष के नीचे बैठकर बच्चे बातचीत करने लगे।

बच्चे आपस में बात करते हुए कह रहे थे,

"इस दीपावली पर हम अपनी दीदी एवं जीजाजी को घर बुलायेंगे। त्यौहार के दिन घर में मीठी पूड़ियां बनेंगी। दीदी एवं जीजाजी को नये वस्त्र दिये जायेंगे।"

साथियों की बात सुनकर सिद्धराम बोला, "मैं भी दीपावली के दिन अपनी दीदी एवं जीजाजी को बुलाऊँगा। हमारे घर में क्षीर बनेगी। हमारी दीदी और जीजाजी को महीन रेशमी वस्त्र दिये जायेंगे।"

ये बातें सुनकर दूसरे बच्चे ठठाकर हँस पड़े और सिद्धराम की मज़ाक उड़ाते हुए बोले, "क्यों रे सिद्धराम, तेरी दीदी ही नहीं है तो जीजा कहाँ से आगया ? बेकार डींग मार रहे हो ! बताओ, तुम्हारी दीदी कौन है ? उसका नाम क्या है ? तुम्हारे जीजा का नाम क्या है ? वह कहाँ रहते हैं और क्या करते हैं ? उनके बच्चे कितने हैं ?" सब बच्चों ने मिलकर सिद्धराम पर प्रश्नों की झड़ी लग दीं।

सिद्धराम उनके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सका, इसलिए अपमानित होकर वह घर लौट आया।

अपने पुत्र की आँखों में पानी देखकर उसकी माँ ने उसे अपने समीप खींच लिया और उसके आँसू पोंछकर पूछा, "बेटा, क्या तुम कहीं गिर गये ? क्या तुम्हें चोट आगयी ? या किसी ने तुम्हें पीटा ? क्या हुआ, बताओ तो ?"

सिद्धराम ने अपने साथियों की सारी बातें माँ को बताकर पूछा, "माँ, मेरी दीदी कौन है ? मेरे जीजाजी कहाँ हैं ?"

माँ ने सारी स्थिति समझकर पुत्र से कहा, "बेटा, तुम उनकी बातों पर ध्यान मत दो ! तुम्हारी दीदी का नाम भ्रमरांबा है और तुम्हारे जीजा का नाम मल्लिकार्जुन है। वे दोनों श्रीशैल पर्वत पर निवास करते हैं। समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी हैं। उनके कार्तिकेय एवं गणेश नाम के दो पुत्र हैं। तुम्हारे जीजा सर्वेश्वर हैं। समस्त लोक उनके आदेश पर चलते हैं। तुम्हारी जैसी दीदी और जीजा इस संसार में और किसी के नहीं हैं।"
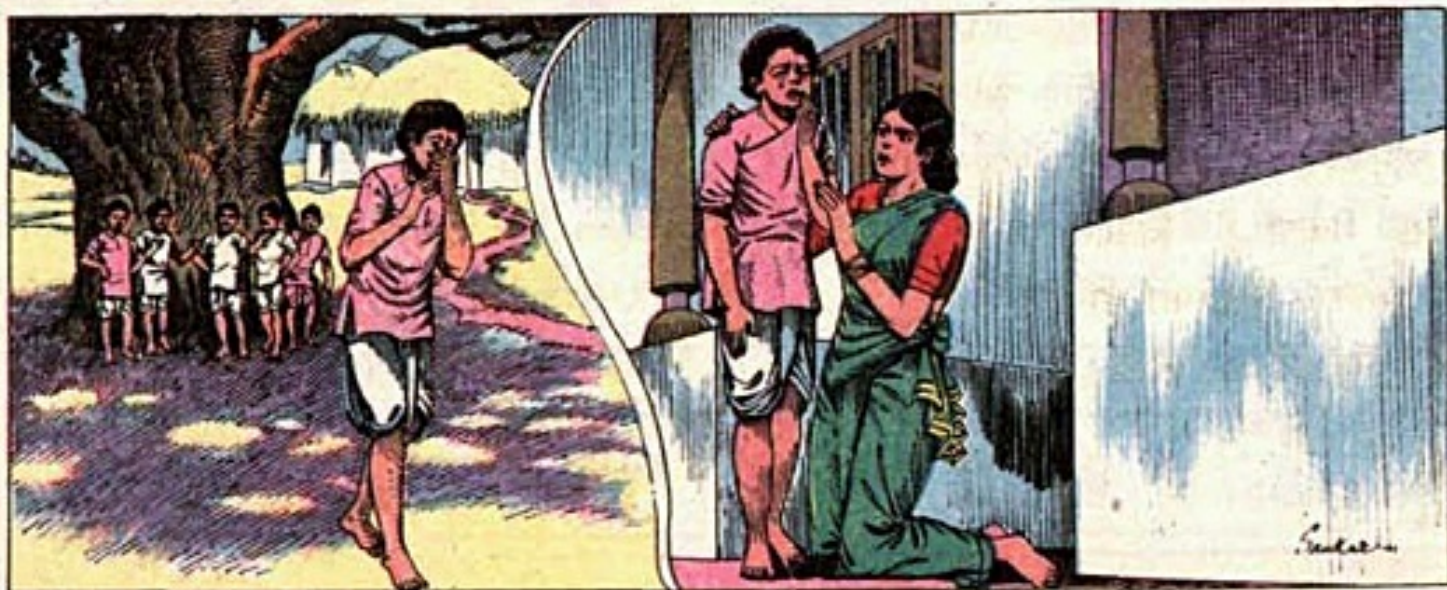
छोटा-बड़ा

एक बार एक दार्शनिक और एक किसान के बीच बहस छिड़ गयी ।

दार्शनिक ने कहा, "तुम्हारा सारा जीवन घास निराना, हल जोतना, फसल काटना— इन्हीं सब कामों में पूरा हो जाता है। भाई, तुम्हें न केवल खेत की घास निराना बल्कि अपने मन की घास को भी निराना चाहिए । वरना, उस घास और तुम्हारे बीच अन्तर ही क्या है ?"

किसान ने दार्शनिक की बातें सुनकर कहा, "महाशय, आप मेरे जीवन की उपयोगिता के बारे में नहीं जानते । मैं समाज के लिए आपसे कहीं अधिक उपयोगी हूँ । आपके दार्शनिक उपदेशों के अभाव में यह संसार आराम से जीवित रह सकता है । लेकिन मेरे द्वारा होनेवाली पैदावार के बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता ।" किसान का जवाब सुनकर दार्शनिक चिन्तामग्न होगाया ।

किसान फिर बोला, "महाशय, आप चिन्ता क्यों करते हैं ? मैं आपको एक छोटी-सी कहानी सुनाता हूँ । आज जैसे हमारे बीच तर्क आरंभ हुआ है, ऐसे ही एक बार पत्थर और पंक के बीच विवाद होगया था। पत्थर ने दर्प में आकर कहा था, 'मुझे देखो, मैं कितना साफ़-सुथरा, चमकदार, दृढ़ और सुन्दर हूँ ।' तुम्हारे ऊपर पैर पड़ने पर मनुष्य घृणा से भर जाता है और धोने के बाद ही जी का चैन पाता है ।'

"अभिमानी पत्थर के मुख से ये बातें सुनकर पंक का स्वाभिमान जाग उठा । वह कड़क कर बोली, 'अरे पाषाण, देखने में मैं बदसूरत हो सकती हूँ, पर मेरे अन्दर के पानी और खाद के उपयोग से आदमी फसल पैदा करता है और अपना आहार पाता है। मैं मनुष्य की प्राण-रक्षा में काम आती हूँ, समझे !' "

किसान के मुँह से यह वार्ता सुनकर दार्शनिक ने बड़े संयत स्वर में उत्तर दिया, "अरे

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित एक कहानी

भाई, पंक ने जो उत्तर दिया, उसका हम तिरस्कार नहीं कर सकते। लेकिन पत्थर का पक्ष भी विचारणीय है। पंक की मदद से फसल होती है तो पत्थर और शिलाएं बड़े-बड़े महल एवं भवनों के निर्माण में काम आते हैं। वास्तव में, अपने-अपने स्थान पर इन दोनों का ही उपयोग है। इन दोनों की ही आवश्यकता है।''

''दार्शनिक महोदय, अब आपने सही समझा। आपने यह स्वीकार किया कि इस संसार के लिए प्रत्येक मनुष्य एवं वस्तु की आवश्यकता है और वे उपयोगी हैं। मैं आपको एक कहानी और सुनाना चाहता हूं। हो सकता है आपने सुनी भी हो, कहानी सुनने के बाद आप अपना विचार प्रकट कीजियेगा।''

किसान ने कहानी प्रारंभ की।

''एक जंगल में एक विशाल बट का पेड़ था। पास में ही एक सागवान का पेड़ भी था। एक बार बट के पेड़ ने सागवान से कहा, 'मुझे देखो, हज़ारों लोग मेरी छाया में आश्रय पाते हैं सूप की तरह विशाल तुम्हारे पत्ते हैं पर मनुष्य के लिए तुम्हारा कोई उपयोग नहीं है।''

''सागवान बोला, 'अरे घमंडी बट दादा, तुम अपना अहंकार छोड़ दो! तुम्हारी हैसियत क्या है और तुम जो छाया देते हो उसका मूल्य ही कितना है? मेरी लकड़ी को देखो! आदमी उसका उपयोग अपना मकान बनाने में करता है और पीढ़ी तक सुखपूर्वक उसमें अपना जीवन बिताता है।' सागवान ने मुँह तोड़ उत्तर दिया।'

किसान के मुँह से यह कहानी सुनकर दार्शनिक ने उसे गले लगाया और उसका आदर करते हुए बोला, ''भाई, तुम इस समय शरीर को छाया देने वाले बट वृक्ष हो और मैं घर बनकर मन को शांति प्रदान करने वाला सागवान हूं। फसल को प्राण देनेवाली मिट्टी तुम हो और बड़े-बड़े भवनों के निर्माण में लगनेवाला पत्थर मैं हूं। अगर किसान शरीर की रक्षा में सहायक है तो दार्शनिक अपने चिन्तन-मनन से मानव के मन को सुदृढ़ बनाता है। संसार में कोई छोटा या बड़ा नहीं है। सभी की आवश्यकता है, सभी उपयोगी हैं।''

असली चोर

रत्नगुप्त सेठ चंद्रनगर का एक संपन्न व्यापारी था। एक रात उसके घर में दस हज़ार स्वर्ण मुद्राओं की चोरी होगयी। जिस कमरे में तिजोरी थी, उसके बगलवाले कमरे में चार नौकर सोते थे। रत्नगुप्त सेठ को इस चोरी में उनका हाथ लगा।

रत्नगुप्त सेठ अत्यन्त साधु प्रकृति का था। वह किसी को भी कठोर शब्द नहीं बोल पाता था। उसका एक सहयोगी था सोमचंद्र। वह अत्यन्त बुद्धिमान और कुशल आदमी था और सेठ रत्नगुप्त के कारोबार में हाथ बँटाता था। रत्नगुप्त ने अपने विश्वासपात्र सोमचंद्र को यह घटना सुनायी और उससे अनुरोध किया कि नौकरों के मन को दुखाये बिना वह उन चारों में से असली चोर का पता लगा ले।

सोमचंद्र ने सेठ को आश्वासन दिया और उन चारों नौकरों को एक कमरे में बुलाया और कहा, "तुम चारों रात को तिजोरीवाले कमरे की बगल में ही सोये हुए थे। उस कमरे में चोरी हो गयी है। रत्नगुप्त सेठ सज्जन पुरुष हैं कि तुम्हें हवालात में बन्द नहीं करवाया। अब जो होना था, सो होगया। शाम तक खोया हुआ धन अपनी जगह पर पहुँच जाना चाहिए। अगर ऐसा न हुआ तो तुम लोग बड़ी मुसीबत में फँस जाओगे। जो अपनी गलती को स्वीकार करता है, उसे दण्ड नहीं दिया जाएगा। बाकी लोग भी दण्ड पाने से बच जायेंगे। यह बात अच्छी तरह याद रखना!"

शाम तक धन नहीं आया। अगले दिन सोमचंद्र ने उन चारों को अलग-अलग एक कमरे में बुलाया। सबसे पहले धर्मवीर नाम का नौकर आया।

सोमचंद्र ने उससे कहा, "धर्मवीर, चोरी तुमने ही की है। इस बारे में मेरे पास बड़े पुख़्ता प्रमाण हैं। तुम अपने अपराध को स्वीकार कर धन ला दो, मैं तुम्हें छोड़ दूँगा। तुम्हारी कोई

हानि नहीं होगी ।"

धर्मवीर आहत होकर बोला, "बाबूजी, मैं पिछले दस साल से इस घर में काम करता आ रहा हूँ । कभी किसी ने मुझ पर सन्देह नहीं किया । मालिक का नमक खाया, अब नमक हरामी का आरोप लगाया जा रहा है । ऐसी हालत में मेरे ज़िन्दा रहने से फ़ायदा ही क्या है ? हाय, आज मेरे ये कम्बख्त प्राण निकल जाते तो कितना अच्छा होता । यह दुर्दिन मुझे देखने को न मिलता । और मुझ पर यह कलंक न लगता । हाय । मुझे यह दिन देखने को ही ज़िन्दा रहना था !"

सोमचंद्र ने धर्मवीर को भेजकर भूषणमल को बुला भेजा । उसके सामने भी वे ही बातें दुहरायीं जो धर्मवीर से कही थीं । वह थर-थर काँप उठा और बोला, "बाबूजी, आप मुझे बचाइये ! मैं इस चोरी के बारे में सचमुच ही कुछ नहीं जानता ।" यह कहकर उसने सोमचंद्र के पैर पकड़ लिये ।

"अरे, यह बता, अगर तूने चोरी नहीं की तो इतना डर क्यों रहा है ? तेरे खिलाफ़ मेरे पास ऐसे सबूत हैं कि बस कल ही तेरी ख़बर लूँगा ।" यह कहकर सोमचंद्र ने भूषणमल को भी विदा कर दिया । इसके बाद रामनाथ की बारी आयी ।

सोमचंद्र ने जब रामनाथ पर चोरी का इल्ज़ाम लगाया तो वह तैश में आकर बोला, "बाबूजी, आप सोच-समझकर बात कीजिये ! आप अमीर और हम ग़रीब हो सकते हैं । पर आप हम पर इस प्रकार झूठमूठ के इलजाम लगायेंगे तो हम सहन करने के लिए तैयार नहीं हैं ।"

"ऐसी गीदड़-भभकियों से मैं डरनेवाला नहीं हूँ । तुम पास के कमरे में सोये रहो और कोई तिजोरी खोलकर माल ले जाये ? यह कोई बात हुई ? निश्चय ही इस चोरी के पीछे तुम्हारा हाथ है । तुम लोगों को तिजोरी के पास वाले कमरे में सुलाया ही इसलिए जाता था कि चौकसी रहे । लेकिन तुम लोग अपनी जिम्मेदारी को ही भूल बैठे । जाओ, मेरे पास काफ़ी तगड़ा सबूत है, अब कल मैं तुम्हारी ख़बर लूँगा ।" यह कहकर सोमचंद्र ने रामनाथ को भी विदा

किया ।

अन्त में चंद्रनाथ आया । उसने भी रामनाथ की भाँति दृढ़ शब्दों में सोमचंद्र की बातों का डट कर खंडन किया । इस पर सोमचंद्र ने कहा, "जब सेठ रत्नगुप्त को लूटा जा रहा था, तब तुम गहरी नींद सो रहे थे । यह भी तो अपराध ही है ।"

चंद्रनाथ खीज कर बोला, "मुझे घर के काम-काज के लिए नियुक्त किया गया है, घर का पहरा देने के लिए नहीं । हम दिन भर कड़ी मेहनत करते हैं, इसलिए रात को गहरी नींद सोते हैं तो इसमें आश्चर्य की कौन सी बात है ? आप हमें पहरेदार के पद पर नियुक्त कीजिए तो हम दिन भर सोकर रात को पहरा देंगे । उस समय अगर कोई चीज़ चोरी चली जाये तो हमें अपराधी ठहराइये ।"

सोमचंद्र ने चंद्रनाथ को भी भेज दिया । फिर वह सेठ रत्नगुप्त के पास जाकर बोला, "सेठजी, यह बात तो स्पष्ट होगयी है कि यह चोरी इन चारों ने मिलकर नहीं की है । इनमें धर्मवीर और रामनाथ तो पूरी तरह निर्दोष हैं । मेरा सन्देह तो भूषणमल पर है । उसने चंद्रनाथ के साथ मिलकर चोरी की होगी । इसलिए हमें तुरन्त इन दोनों के घरों की तलाशी लेनी है ।"

सेठ रत्नगुप्त ने अपने मकान के पिछवाड़े में इन नौकरों के लिए चार छोटे-छोटे घर बनवा दिये थे । वहाँ वे लोग अपने कुटुम्बियों के साथ

रहते थे । पर रात के लिए यह व्यवस्था थी कि वे चारों नौकर सेठ रत्नगुप्त के मकान में ही सोयें ।

काफ़ी खोज-बीन करने के बाद भी भूषणमल और चंद्रनाथ के घर से कोई चीज़ बरामद नहीं हुई । अब सोमचंद्र ने रत्नगुप्त से कहा, "सेठ जी, इसका मतलब है कि चंद्रनाथ भी निर्दोष है । मेरे ख्याल से केवल भूषणमल ही अपराधी नज़र आता है । या तो उसने खुद चोरी की है या कम से कम उसे चोर का पता अवश्य है ।"

"लेकिन यह बात उससे कैसे कुबूल करवायी जाये ?" रत्नगुप्त ने पूछा ।

"अब तो केवल एक ही उपाय है । उस पर

कड़ी निगरानी रखनी होगी, वह भी उसकी जानकारी के बग़ैर।" सोमचंद्र ने उत्तर दिया।

रत्नगुप्त ने भूषणमल पर पूरी निगरानी रखने की व्यवस्था कर दी। इस घटना के दस दिन बाद भूषणमल बड़े बाज़ार में रेशमी साड़ियां ख़रीद रहा था। सोमचंद्र के पास सूचना पहुँची तो उसने उसे वहीं जा पकड़ा। उसी वक्त उसके कपड़ों की तलाशी ली गयी तो सौ मुद्राएँ हाथ लगीं।

सोमचंद्र ने गरज कर पूछा, "बताओ, तुम्हारे पास यह धन कहाँ से आया ?"

भूषणमल की बोलती बन्द होगयी। वह डर के मारे थर-थर काँपने लगा। सोमचंद्र उसे रत्नगुप्त के पास ले गया।

सोमचंद्र के अनुसार भूषणमल चोर करार कर दिया गया। रत्नगुप्त ने भूषणमल को बाकी धन लाने का आदेश दिया।

भूषणमल थर-थर काँपता हुआ बोला, "मालिक, यह चोरी मैंने नहीं की है।"

"तो बताओ, किसने की है ?" रत्नगुप्त ने डाँटकर पूछा।

"मैं सच बात बता दूँगा तो धनगुप्त बाबू मुझे मार डालेंगे।" भूषणमल ने उत्तर दिया।

धनगुप्त का नाम सुनकर रत्नगुप्त चौंक पड़ा। धनगुप्त रत्नगुप्त की पत्नी का छोटा भाई था। वह सारा दिन आवारागर्दी करता था, इसलिए उसके पिता ने उसे किसी काम से लगाने के लिए अपने दामाद रत्नगुप्त के पास भेज दिया था।

रत्नगुप्त ने भूषणमल से कहा, "तुम डरो मत। सारी घटना साफ़-साफ़ बता दो !"

भूषणमल ने कहा, "मालिक, हम चारों नौकर जहाँ सोते हैं, उसके पास वाले कमरे में आपकी तिजोरी है और सारा रुपया, गहना वहीं रहता है, यह बात हम अच्छी तरह जानते हैं। इसलिए हम चारों ने यह नियम बना रखा था कि बारी-बारी से एक-एक जन जागकर रखवाली करे और बाक़ी लोग सो जायें। उस रात जब मैं जाग रहा था तो धनगुप्त बाबू बिल्ली की तरह दबे पाँव वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने मुझे जागते हुए देखा तो छुरी निकाल कर मुझे डराया और धमकी दी कि अगर मैं यह

बात किसी पर प्रकट करने की कोशिश करूँगा तो वह इसी छुरी से मेरा ख़ात्मा कर देंगे। मैं चुप बैठा रहा और वे नकली चाबी लेकर तिजोरी खोलने लगे। उन्होंने आपके दस हज़ार सिक्के चुराकर दो सौ मुझे रिश्वत के तौर पर दिये। वे सिक्के मैंने उन्हीं के कमरे में रख छोड़े हैं।"

सारी बात जानने के बाद रत्नगुप्त ने अपने साले के कमरे की तलाशी ली तो उसे सारा धन मिल गया। धनगुप्त ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। रत्नगुप्त की पत्नी ने अपने भाई को डाँटकर उसे अपने पिता के घर भेज दिया।

इसके बाद रत्नगुप्त सेठ ने सोमचंद्र को अपने कमरे में बुलाकर कहा, "तुमने असली चोर तक मुझे पहुँचा ही दिया। पर यह तो बताओ, तुमने इस बात का अन्दाज़ कैसे लगाया कि भूषणमल ही इस चोरी की कुछ जानकारी रखता है और बाक़ी तीनों निर्दोष हैं ?"

सोमचंद्र मुस्कराकर बोला, "इसमें मुझे अधिक कठिनाई नहीं उठानी पड़ी। निर्दोष व्यक्ति पर दोषारोपण करने पर वह अत्यन्त दुखी हो जाता है। धर्मवीर पर जब आरोप लगा तो वह अत्यन्त व्याकुल हो गया। इसलिए मैं समझ गया कि उसने चोरी नहीं की है। पर धर्मवीर के अन्दर उतना स्वाभिमान नहीं था, इसलिए वह विरोध नहीं कर सका। रामनाथ ने विरोध किया। निर्दोष व्यक्ति पर इल्ज़ाम लगे तो वह बौखला उठता है। रामनाथ ने यही किया। अब रही चंद्रनाथ की बात। उसने केवल क्रोध ही प्रकट नहीं किया, बल्कि यह भी कहा कि घर की रखवाली का दायित्व उसका नहीं है। ऐसे व्यक्ति में निर्दोष और दोषी होने की दोनों संभावनाएँ मौजूद रहती हैं। लेकिन भूषणमल अपने ऊपर चोरी का आरोप लगते ही काँप उठा। चोर अगर कच्चा हो तो वह अवश्य ही डर जाता है। भूषणमल को देखकर मैं समझ गया कि भले ही उसने चोरी न की हो, पर चोरी का पता उसे अवश्य है।"

रत्नगुप्त सेठ ने सोमचंद्र की बुद्धिमत्ता की भूरि-भूरि प्रशंसा की।
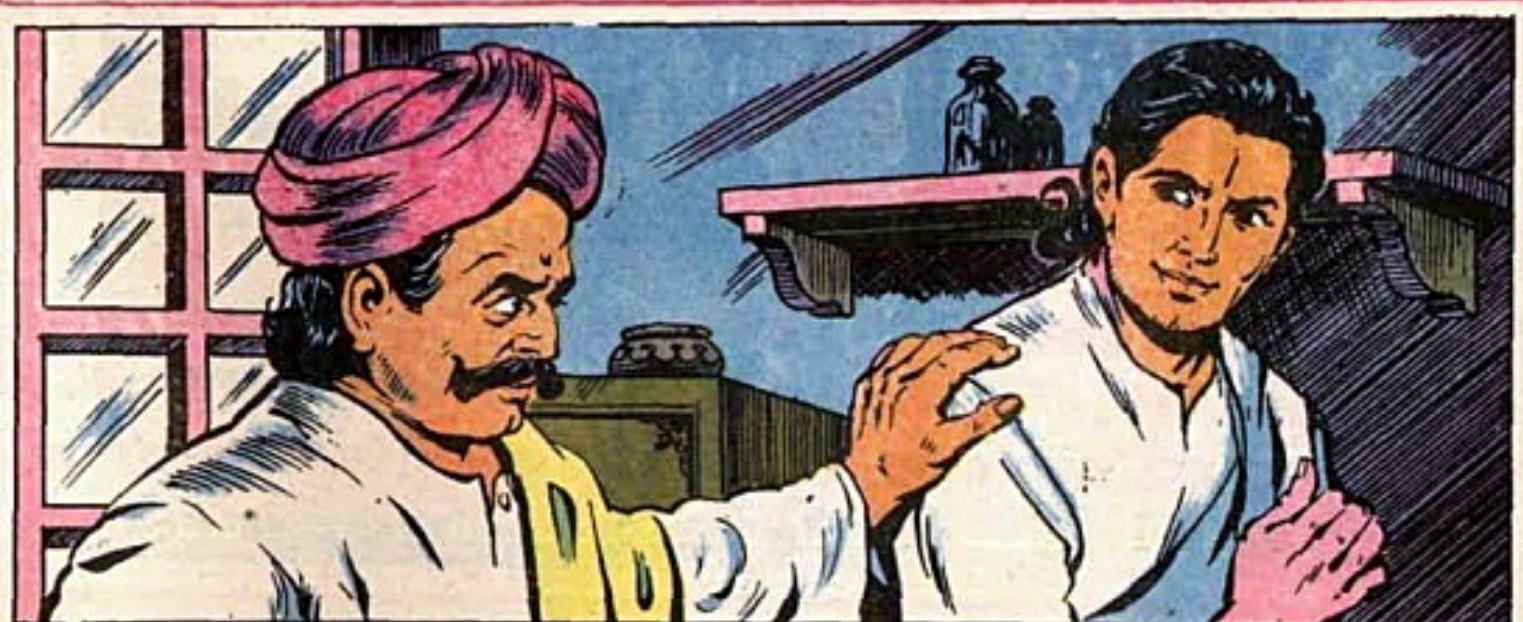
तैराक वैद्य

शीतलपुर में वृषभेंद्र नाम का एक वैद्य था। एक रात पड़ोसी गाँव से उसका बुलावा आया तो वह अपनी दवाइयों का थैला लेकर चला गया। उसने बिना सोचे-विचारे रोगी को दवा दे दी, इसके परिणाम स्वरूप रोगी का देहान्त होगया। रोगी के रिश्तेदारों को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने वैद्य को पिछवाड़े के एक पेड़ से बाँध दिया और बोले, "तुम्हें क्या दंड मिलना चाहिए, इसका फैसला सुबह करेंगे।" यह कहकर वे चले गये।

वृषभेंद्र ने बड़ी मुश्किल से अपने बन्धन खोले और भाग निकला। रास्ते में एक चौड़े पाट की नदी थी। उसने उसे तैरकर पार किया और तब हाँफता-हाँफता अपने घर पहुँचा। उस समय वृषभेंद्र का पुत्र सत्येंद्र लालटेन जलाये वैद्यक की एक क़िताब पढ़ रहा था।

वृषभेंद्र ने सत्येंद्र के पास जाकर सलाह दी, "बेटा, वैद्यक ग्रन्थों में ही मत डूबे रहो! अगर कोई मेरे जैसा वैद्य बनना चाहता है तो उसे सबसे पहले तैरने की विद्या आनी चाहिए।"
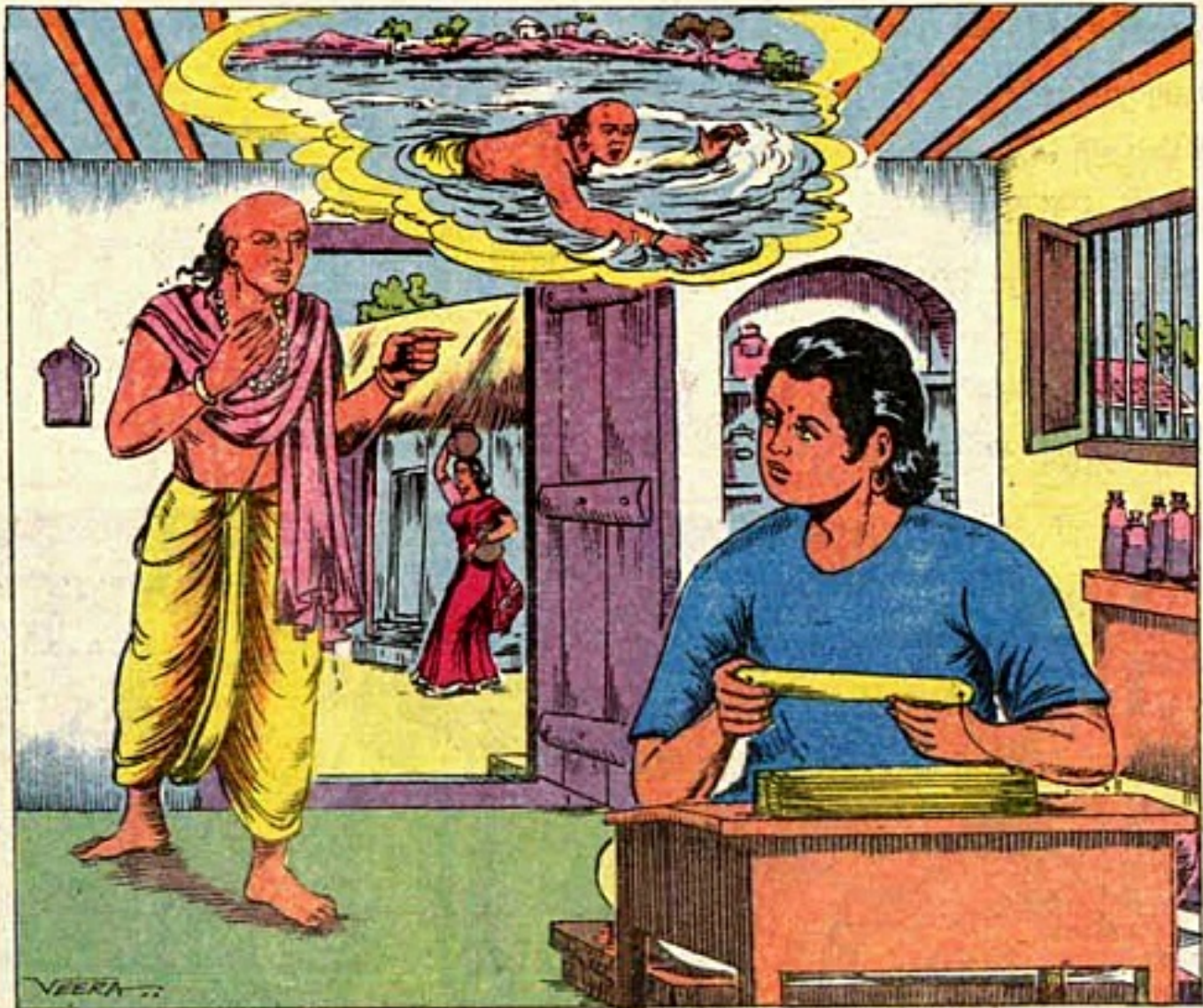
कर्ज़ की वसूली

देवतापुर में वीरदास नाम का एक धनवान सेठ रहा करता था। वह महाजनी का व्यापार करता था। वीरदास ज़रूरतमन्द लोगों को उचित ब्याज लेकर कर्ज़ देता था। देवतापुर के अधिकांश लोग ज़रूरत के समय वीरदास से कर्ज़ लेते और धीरे-धीरे वह रक़म किश्तों में चुका देते।

पास ही के एक गाँव धरमपुर में यशपाल नाम का एक धनवान रहता था। यशपाल के बाप-दादाओं ने अपार संपत्ति छोड़ी थी, फिर भी वह और अधिक जोड़ने की इच्छा से महाजनी करता था। वह धरमपुर के ज़रूरतमन्द लोगों को पैसा देकर अधिक ब्याज वसूल करने का प्रयत्न करता था। पर उसे हर कर्ज़दार से ब्याज और मूल धन की वसूली में बड़े संकट का सामना करना पड़ता था। यशपाल को कर्ज़ की वसूली के लिए अपने लठैतों की मदद लेनी पड़ती थी। इस काम के लिए उसे और भी कुछ धन खर्च करना पड़ता था। उल्टे मन को कभी शांति न मिलती थी। जनता के बीच वह अत्यन्त निरादर का पात्र बना हुआ था।

यशपाल वीरदास के बारे में सुन चुका था। एक दिन वह देवतापुर जाकर वीरदास से मिला। इधर-उधर की बातचीत के बाद उसने वीरदास से पूछा, "भाई वीरदास, यह बताइए, आप अपने कर्ज़दारों से कर्ज़ की वसूली कैसे करते हैं?"

वीरदास सहज भाव से बोला, "मेरे द्वारा कर्ज़ वसूल करने का सवाल ही नहीं उठता। कर्ज़दार स्वयं आते हैं और अपना ऋण चुकाकर चले जाते हैं।"

"पर कुछ लोग हठी होते हैं न! उनसे आप कर्ज़ की वसूली कैसे करते हैं?" यशपाल ने पूछा।

"मैं हठी से हठी आदमी से भी आसानी से

मालती वार्ष्णेय

अपना पैसा निकलवा सकता हूँ।" वीरदास ने दृढ़ विश्वास के स्वर में कहा ।

यशपाल कुछ देर तो सोचता रहा, फिर बोला, "अच्छी बात है। मैं आपसे दो सौ रुपया कर्ज़ लेता हूँ। आप मुझसे यह रक़म छह माह में वसूल करके दखाइये ! इसके लिए मैं एक हज़ार रुपये की शर्त लगाता हूँ। मेरी शर्त आप को स्वीकार है ?"

यशपाल की बात सुनकर वीरदास मुस्करा-कर बोला, "वैसे मैंने आपके बारे में सुना है, फिर भी मेरा अपना एक नियम है। देवतापुर के लोगों के अलावा जब मैं किसी दूसरे गाँववाले को कर्ज़ देता हूँ तो उसकी कोई न कोई चीज़ गिरवी रख लेता हूँ। आप बुरा न मानें, मैं किसी हालत में अपने नियम को तोड़ना नहीं चाहता हूँ।"

"ठीक है !" यशपाल ने कहा, फिर बोला, "पर मेरी एक शर्त है। आप अपना कर्ज़ वसूल करते समय गिरवी रखी मेरी चीज़ को वापस कर देंगे।" और उसने अपने हाथ का सोने का कंगन वीरदास के हाथ में रखकर कहा, "आपको छह महीने के अन्दर मुझसे कर्ज़ वसूल करना होगा। पर ऐसा न हो कि आप मेरे गिरवी रखे इस कंगन को बेचकर यह कह दें कि रक़म चुक गयी ! मेरी शर्त आपको मंजूर है न ?"

वीरदास ने हँसकर कहा, "आप की शर्त मुझे मंजूर है !" और उसे दो सौ रुपये का कर्ज़ दे दिया ।

उस दिन के बाद यशपाल अत्यन्त सावधान रहने लगा कि कहीं किसी बहाने से वीरदास कर्ज़ वसूल न कर ले ।

छह महीने बीत गये ।

वीरदास ने यशपाल के पास कर्ज़ चुकाने का कोई तकाज़ा न किया। यशपाल यह मानकर वीरदास से मिलने गया कि वह शर्त जीत गया है ।

यशपाल को देखते ही वीरदास ने उत्साह में आकर पूछा, "क्या आप शर्त के रुपये ले आये हैं ?"

यशपाल ने विस्मित होकर पूछा, "कैसे शर्त के रुपये ? शर्त आप हारे हैं कि मैं ? आप मेरा

कर्ज़ वसूल नहीं कर पाये हैं। छह महीने हो चुके हैं। जीत तो मेरी हुई है।"

वीरदास मुस्करा कर बोला, "यशपाल भाई, आपको दिया कर्ज़ तो मैं कभी का वसूल कर चुका हूँ।"

"यह झूठ है। आपने कर्ज़ कब वसूल किया ? आपके पास वसूली का कोई सबूत है ? हारी हुई शर्त के रुपये बचाने के लिए आप झूठ बोल रहे हैं।" यशपाल एक दम उत्तेजित हो उठा।

"मुझे झूठ बोलने की कोई आवश्यकता नहीं है और न मेरी आदत ही है !" वीरदास ने संयत स्वर में जवाब दिया। फिर अपने नौकर गोवर्धन को बुलाकर यशपाल की तरफ़ संकेत करते हुए कहा, "क्या तुम इन्हें जानते हो ?"

गोवर्धन नाम के उस नौकर को देखते ही यशपाल को सारी बात समझ में आगयी। बात ऐसी हुई थी, क़रीब चार महीने पहले एक दिन रात को ज़ोर की बारिश हो रही थी। यशपाल भोजन करके उसी समय बरामदे में आया था कि तभी बारिश में बुरी तरह भींगता एक आदमी उसके पास आया और दयनीय स्वर में बोला, "बाबूजी, मुझे बचाइये। मेरी औरत मौत की घड़ियाँ गिन रही है। तुरन्त उसे शहर के अस्पताल में ले जाना होगा। मुझे कृपया दो सौ रुपया उधार दे दीजिये, आप की बड़ी मेहरबानी होगी।"

यशपाल ने उसकी तरफ़ देखकर खीजकर कहा, "वाह, जान न पहचान, बड़े मियाँ

सलाम ! मैं तो यह भी नहीं जानता, तुम्हारा नाम, पता क्या है ? कर्ज़ कैसे दूँ ?" फिर कुछ नरम होकर कहा, "गिरवी रखने को कोई चीज़ तुम्हारे पास है ?"

"बाबूजी, मैं लेकर ही आया हूँ।" यह कह कर उस आदमी ने अपने कपड़ों में से सोने की एक चूड़ी निकाली और यशपाल के हाथ में रखकर कहा, "बाबूजी, शीघ्र कीजिए ! यह मेरी औरत की चूड़ी है। आप मुझे रुपये दे दीजिए !"

सोने की चूड़ी देखकर यशपाल आश्वस्त होगया। उसने तुरन्त करारनामा लिखा और उस आदमी से अंगूठे का निशान लगवाकर दो सौ रुपये दे दिये।

इस प्रकार वीरदास ने अपने नौकर गोवर्धन के माध्यम से यशपाल से पहले ही कर्ज़ वसूल कर लिया ।

यशपाल उत्तेजित होकर बोला, "यह तो सरासर धोखा है । हमारी शर्त थी कि आप मेरे गिरवी रखे कंगन को कर्ज़ वसूल करने के पहले मुझे वापस देंगे । आपने वह शर्त नहीं निभाई, तिस पर मुझे चिढ़ा रहे हैं !"

"इसमें धोखा-दग़ा कुछ नहीं है । उस रात मेरे नौकर ने आपके पास सोने की जो चूड़ी गिरवी रखी थी, वह आपकी ही है । अन्तर केवल इतना है कि आपने मेरे पास सोने का जो कंगन गिरवी रखा था, उसे गलवाकर मैंने चूड़ी बनवा दी थी । आप चाहें तो तौलकर उसका वज़न देख लें, कंगन जितना है । अब आपको मुझे ब्याज चुकाने की ज़रूरत भी नहीं है ।" वीरदास ने सब स्पष्ट कर दिया ।

यशपाल का मन न हुआ कि वह हारी हुई शर्त के एक हज़ार रुपये वीरदास को चुकाये । उसने थोड़ी देर विचार करके कहा, "मैं आपको शर्त के एक हज़ार रुपये नहीं दूँगा । मैं भी देखना चाहता हूँ कि आप मुझसे कैसे वसूल करते हैं ?"

वीरदास खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला, "मुझे पहले ही सन्देह था कि आप इस तरह का रुख़ दिखा सकते हैं । लगभग दो हज़ार मूल्य का आपका कंगन मेरे पास है । गोवर्धन ने जो चूड़ी आप को दी थी, वह खरे सोने की नहीं है । बल्कि ताँबे पर सोने का मुलम्मा चढ़ाया गया है । आप शर्त के एक हज़ार रुपये, नक़ली सोने की वह चूड़ी मुझे देकर अपना कंगन वापस ले जाइये ।" यह कह कर वीरदास ने गोवर्धन से तुरन्त कंगन लाने को कहा ।

यशपाल चिन्तित हो उठा । वह गाँव जाकर चूड़ी ले आया । उसने एक हज़ार रुपये और वह चूड़ी देकर वीरदास से अपना कंगन ले लिया । तभी उसके दिमाग़ में एक विचार आया । उसने वीरदास से कहा, "आपसे कर्ज़ लेते समय जो समझौता हमारे बीच हुआ था, उसका आपने निर्वाह नहीं किया । आपको रक़म की वसूली के समय मेरी गिरवी रखी चीज़ वापस करनी थी । पर आपने मुझे नक़ली चूड़ी देकर अपने वचन

से मुकर गये !''

''वचन से मुकरने का सवाल ही नहीं उठता है।'' वीरदास ने मुस्करा कर कहा, फिर बोला, ''यशपाल जी, मैं आपको देखते ही समझ गया था कि आप बड़े होशियार आदमी हैं और आपसे कर्ज़ की वसूली सीधे तौर पर नहीं हो सकेगी। इसीलिए मुझे यह सब झंझट करना पड़ा। मैंने अपने नौकर के द्वारा जो यह चूड़ी आपके पास भेजी थी, वह नक़ली नहीं, खरे सोने की है। इसके अलावा कंगन के वज़न के बराबर है। चीज़ का आकार ज़रूर बदल गया है, पर जो मेरा वचन था, वह मैंने पूरा किया है और कर्ज़ वसूल करते समय आपके कंगन के वज़न का सोना चूड़ी के रूप में आपको दे दिया है। आशा है अब आपका समाधान हो गया होगा।''

''इतना सब सुनने के बाद मैं यह कहने की धृष्टता नहीं कर सकता कि आपने अपना वचन पूरा नहीं किया। अब तो मैं यह भी समझ गया हूँ कि महाजनी के मामले में मैं आपके सामने एक बच्चा ही हूँ और मुझे इस धंधे के बारे में आपसे बहुत कुछ सीखना होगा।'' यशपाल ने उठते हुए कहा।

वीरदास ने यशपाल को ठहरने का संकेत करते हुए उसे समझाया, ''हम कर्ज़ के रूप में जो धन देते हैं, उसे वसूल करने के लिए कोई योजना या पद्धति नहीं है। मुश्किल तब शुरू होती है, जब हम ज़रूरतमन्द लोगों से अधिक ब्याज वसूल करने के लालच में पड़ जाते हैं। उचित ब्याज पर धन उधार देने से कर्ज़दार के मन में हमारे प्रति कृतज्ञता का भाव होता है और वह समय पर कर्ज़ चुका देने के बारे में स्वयं सचेत रहता है! इसलिए वसूली में तक़लीफ़ नहीं होती।''

''वीरदास जी, मैंने आप को परेशान करना चाहा, पर इस प्रयत्न में मैं असफल रहा। आपने ये सब बातें अपने अनुभव से सीखी हैं। मैं भी आपके अनुभव का लाभ उठाना चाहता हूँ और आपका अनुकरण करना चाहता हूँ।'' यह कहकर यशपाल अपने गाँव लौट गया।

अहंकार

राजा बलवन्त सिंह काफ़ी वृद्ध हो चुके थे। उन्होंने भाष्यग्रन्थों की सहायता से श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन किया और उसके अनुवाद को काव्य रूप में प्रस्तुत किया। काव्य-रचना पूर्ण होने के बाद राजा के मन में यह विचार आया कि उनसे बढ़कर और कोई कवि नहीं है। उस समय राज्य में विष्णुशर्मा को श्रेष्ठतम महाकवि माना जाता था। बलवन्त सिंह ने विष्णुशर्मा के पास यह सूचना भेजी कि जो राजा की समता कर सके, ऐसे किसी कवि को राजधानी में राजा के पास भेजा जाये।

पहले तो विष्णु शर्मा काफ़ी सोच-विचार में पड़ गया, फिर उसने श्रीवत्स नाम के एक युवक को राजा के पास भेज दिया। राजा ने श्रीवत्स से कहा, "तुम जैसे साधारण कवि से मेरा काम नहीं चलेगा। भगवद्गीता जब मेरे जैसे व्यक्ति की समझ में टीका ग्रन्थों और भाष्यों के अध्ययन के बाद आयी, तब तुम क्या समझोगे ? फिर मैंने तो उसे काव्य का रूप दिया है जो और भी गूढ़ है। तुम अपने गुरु विष्णु शर्मा को मेरे पास भेज दो !"

थोड़े दिनों के उपरान्त विष्णु शर्मा स्वयं राजा के पास आया। राजा ने उससे श्रीवत्स नाम के उस युवक कवि की चर्चा की और कहा कि ऐसे नौसिखिये लोगों को उसे राजसभा में नहीं भेजना चाहिए था।

विष्णु शर्मा बोला, "महाराज, आपने भगवद्गीता को समझने के लिए जो टीका -ग्रन्थ पढ़े हैं, वे मैंने ही आपको दिये थे और उन ग्रन्थों का रचयिता श्रीवत्साचार्य यही युवक है।"

राजा यह उत्तर सुनकर चकित रह गया। उसने विष्णुशर्मा से पूछा, "पर उस युवक ने यह बात मुझे नहीं बतायी। क्या वह इतना विद्वान, इतना बड़ा कवि है ?"

विष्णुशर्मा ने नम्र स्वर में कहा, "सच्चे कवि और विज्ञ जन कभी आत्म प्रशंसा नहीं करते।"

यह सुनकर वृद्ध राजा बलवन्त सिंह का अहंकार जाता रहा।

विचित्र जलचर

समुद्र-गर्भ की प्रवाल-शिलाएँ विभिन्न प्रकार की मछलियों का निवास बनी हुई हैं। इन शिलाओं के आश्रय में अनेक विचित्र प्रकार के विष प्राणी भी निवास करते हैं। इन विषैले जलचरों में समुद्री अनिमोनी एक प्रमुख प्राणी है। अनिमोनी (वायु पुष्प) नाम का यह जलचर देखने में रंग-बिरंगे फूल के समान जान पड़ता है। पर वह मछलियों तथा अन्य जलचरों के लिए अत्यन्त ख़तरनाक है। अनि मोनी के सिर पर फूल की पंखुरियों के समान जो चीज़ हिलती रहती है, वह उसकी विष से भरी लंबी मूँछें हैं। छोटी मछली या अन्य कोई जलचर अगर उसकी मूँछ के रंग से आकर्षित होकर उसके पास जाते हैं, तो उसके स्पर्श के दूसरे ही क्षण में वे मर जाते हैं। ऐसे मरे हुए प्राणियों को अनिमोनी मज़े से खाता है। इसकी मूँछ का छोर सुई जैसा होता है। अनिमोनी का विष अपना प्रभाव केवल कुछ ही प्राणियों पर डाल पाता है, पास आनेवाले हर प्राणी पर नहीं।

प्रवाल शिलाओं के आश्रय में रहनेवाले ये अनिमोनी साधारणतः २० सेंटिमीटर से अधिक लंबे नहीं होते। पर आस्ट्रेलिया किस्म का अनिमोनी एक मीटर लंबा होता है। यह जलचर लगभग ३० वर्ष तक प्रवाल शिलाओं से लगा रहता है। प्रयोग शालाओं में कुछ प्राणी ८० वर्ष तक जीवित रहे। कुछ जंतुशास्त्रियों का विश्वास है कि इनमें से कुछ प्राणी ३०० वर्ष तक जीवित रह सकते हैं। इस हिसाब से विश्व में अधिक समय तक जीवित रह सकने वाला जलचर यही होता है।

इनकी संतति की वृद्धि दो-तीन प्रकार से होती है। कुछ जन्तु अण्डे देकर अपनी संतति-वृद्धि करते हैं तो कुछ जन्तु एक प्राणी से दूसरे प्राणी के रूप में निकल कर नये रूप में जन्म लेते हैं।

समुद्र-गर्भ में प्रवाल-शिलाओं के बीच बड़े-बड़े झिंगे, केकड़े व घोंघे द्वारा छोड़ी गयी कौड़ी में निवास बनाकर शत्रु जलचरों के हमले से अपनी रक्षा करता है।

यहाँ पर दिखाई देनेवाला एक प्रमुख जलचर है जो अटारफिश कहलाता है और इसकी आकृति नक्षत्र की तरह होती है। इसकी कई किस्में हैं। यह कौड़ी वाली मछलियों को पकड़ लेता है और उसके ऊपरी छिलके को निकाल कर खा जाता है।
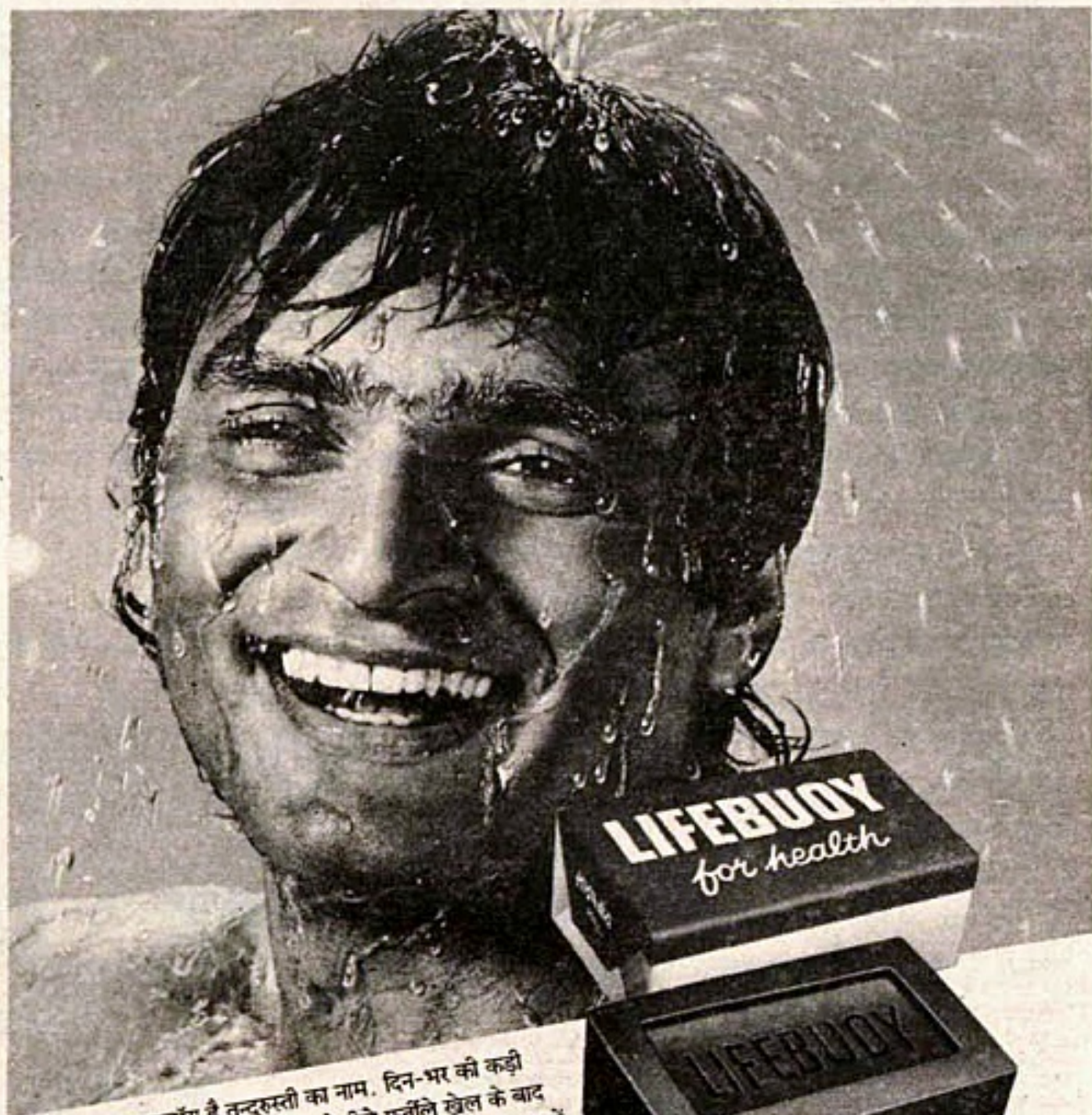
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां जुलाई १९८६ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Mrs. S. Radha

K. P. A. Swamy

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ मई १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मार्च के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : मुक्त प्रभात !

द्वितीय फोटो : गुलामी की रात !!

प्रेषक : आशीष सहाय, द्वारा : विनोद कुमार सिन्हा, काली गली, कटक - २ (ओरिस्सा)

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

**"बनता है ये खेल खेल में हँसी खुशी में, रेल पेल में
सोच समझ कर झट चिपकाओ
मौज-मौज में इसे बनाओ"** **फ़ैवी फ़ैयरी**
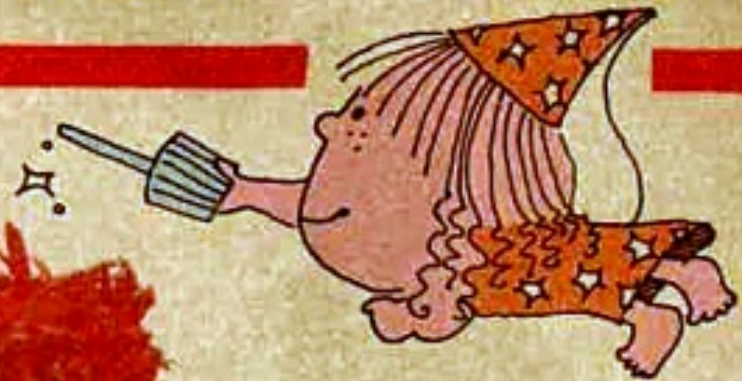
"जादू का करिश्मा नहीं
हाथ का कमाल है
पैसे का सवाल नहीं
काम बेमिसाल है ।"
"जल्दी आकर हमें बताओ
करना क्या है—यह समझाओ ।"
"जल्दी आओ
सब कुछ सुन लो
सोचो समझो झट चिपकाओ
फ़ैविकोल एम आर को लाओ
मोर बनाओ.
गुड़िया, टोकरी, पर्स बनाओ
न चिप-चिप है, न है गंदगी
मज़े-मज़े में करते जाओ
करते जाओ ।।"

इस जापानी फूल—क्रिसेन्थमम्—को बनाने की क्रमवार रीति मुफ़्त प्राप्त करने के लिए, यह कूपन भेजिए, इस पते पर लिखिए 'फ़ैवी फ़ैयरी' पोस्ट बॉक्स ११०८४ बम्बई-४०००२०.

जापानी फूल-क्रिसेन्थमम् को बनाने की क्रमवार रीति मुफ़्त प्राप्त करने के लिए, यह कूपन 'फ़ैवी फ़ैयरी', पोस्ट बॉक्स ११०८४ बम्बई ४०००२० के पते पर पोस्ट कर दें

नाम: ____________________
वय: ____________________
पता: ____________________
____
नगर: ____________________
राज्य: ____________ पिन: ____________
क्या आपको हमारा अंग्रेज़ कॉन्टैक्ट मिल गया हाँ/नहीं

(Cn)

फ़ैविकोल एम आर
सिन्थेटिक एड्हेसिव

उत्तम काम, उत्तम नाम फ़ैविकोल का यह परिणाम

OBM-7070 HN

मांजी?
पारले-G!
PARLE
Gluco
BISCUITS
'पारले-G'ही क्यों?
जिससे अपनेपन का नाता जोड़ लिया,
उसे प्यार के नन्हे नाम से ही तो पुकारना चाहेगा हर
कोई. फिर चाहे वह पारले ग्लुको बिस्किट ही क्यों न हो.
तो बस, पारले ग्लुको को जीभर के पुकारो
'पारले-G' और जीभर के गाओ उनके गुण–
जीभर उत्तमता–जो बढ़िया दूध, गेहूँ और शक्कर के मधुर मिश्रण से आए.
जीभर शक्ति–जो शरीर के विकास में सहायक–ग्लुको लाए.
जीभर स्वाद–जो जीवनभर जीभ पर बसा रहे, जी को लुभाए.
PARLE
Gluco
प्यार से पुकारो 'पारले-G'
स्वाद में निराले, शक्ति से भरपूर.
भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट.
everest/85/PP/557-hn